ISSN 2455-0310

2.1

LISTED UNDER
UGC APPROVED LIST OF JOURNALS

JIFACTOR

VOLUME 2, ISSUE 1

A Bilingual, Bimonthly Multidisciplinary International e-Journal

TRANSFRAME

SEPTEMBER-OCTOBER 2016

TRANSFRAME

E– journal

VOLUME 2, ISSUE 1

2016

CLICK ON ARTICLES TO READ

STUDY

4 Cinematography : a Brief Historical overview- Transframe

6 पद्धतिबद्ध अभिनय का सौंदर्य – प्रवीण सिंह

10 Foreign Language : why should we learn? – Transframe

PERSONALITY

12 Spike Lee- praveen Singh

14 Edward Sapir – The Editors of Encyclopædia Britannica

CRITICAL EVALUATION

16 रुस्तम , एक सच जो सामने नहीं आता – रूद्रभानु प्रताप सिंह

18 अनुवाद : अवधारणा एवं विमर्श- डॉ. अन्नपूर्णा सी.

RESEARCH

44 अनुवादाभास की संकल्पना और संकेतवैज्ञानिक संदृष्टि – मेघा आचार्य

CREATION

20 लेखनी : सृजन का पल – ऋषभदेव शर्मा

22 तुलिका – मर्लिन

23 कैमरा – शशिरंजन कुमार कुशवाहा

INTERVIEW

24 Dr. RamPrasad Bhatt, Professor Hamburg, Germany –

TRANSLATION

29 नाप तौल की जिंदगी - डॉ. अन्नपूर्णा सी.

LANGUAGE

34 Japanese Language : Kanji, Hiragana and Katakana- Transframe

36 हिंदी साहित्य में राधा का स्वरुप – डॉ चरण जीत सिंह सचदेव

RESEARCH

49 जनपद भिण्ड (म0प्र0) में जनसंख्या का स्थानिक वितरण : एक भौगोलिक अध्ययन डॉ0 पुष्पहास पाण्डेय शिवम् वर्मा

56 Socio Economic Status Related To Academic Achievement of B.Ed. Students- Dr. Sunita Arya

PRACTICE

62 Choosing The Best Digital Camera – Transframe

संपादकीय

....अपनी बात

हिंदी आज विश्व की सबसे अधिक बोली जाने वाली भाषा बन गई है, परंतु भारत में हिंदी की स्थिति से हम सब परिचित है। राजभाषा के रूप में हिंदी संघर्षरत है और राष्ट्रभाषा तक की दूरी इसे अभी भी तय करनी है। राष्ट्रभाषा के बिना देश गूंगा ही कहलाता है। बहरहाल आज अंतरराष्ट्रीय बाजार में हिंदी ने अपना स्थान बना लिया है और हिंदी भाषा भारत जैसे बहुभाषी एवं बहुसांस्कृतिक देश की भाषा के रूप में अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सबसे अधिक जानी-पहचानी और पढ़ी-पढ़ाई जा रही है। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर तो हिंदी का भविष्य उज्ज्वल है। हम भी हिंदी को गर्व की भाषा मान कर उसका प्रयोग करेंगे इस आशा के साथ ट्रांसफ्रेम के पाठकों को हिंदी दिवस की शुभकामनाएँ! प्रस्तुत है ट्रांसफ्रेम का दूसरे वर्ष का पहला अंक।

-संपादक

TRANSFRAME
Bilingual, Bimonthly E- Journal

PUBLISHER
Praveen Singh Chauhan
Peace Aprt., Versova
Andheri (w) Mumbai 400061
T +91 9763706428

EDITOR
Megha Acharya
Praveen Singh Chauhan

LAYOUT & DESIGN
Praveen & Megha

TRANSFRAME TEAM

©All Rights Reserved

The publisher regret that they can not accept liability for error or ommisions contained in this publication, however caused. The opinions and views contained in this publication are not necessarily those of the publishers or editors. No part of this publication or any part of the contents there of may be reproduced or transmitted in any form without the permission of publishers in writing. An exemtion is hereby granted for extracts used for the purpose of fair review.

GO DIGITAL, GO PAPERLESS, SAVE TREES, SAVE

Cinematography

A Brief Historical Overview

अध्ययन

Cinematography is one of the man's efforts to portray to others, through the use of techniques that combine motion pictures and text, the world and the messages it transfers as these are understood by the artist. With the term cinematography, one today describes the discipline of making lighting and camera choices when recording photographic images for cinema use. Based on two Greek words, cinematography etymologically means "writing in the movement" and was introduced as a new technique to record images of people and objects as they moved and project them on to a type of screen. Combined with sculpture, painting, dance, architecture, music, and literature, cinematography is today considered to be the seventh art.

It is very difficult for a researcher to find and pinpoint the one individual that could be named the "father" of cinematography, accepting that the word symbolizes a technique used for motion pictures' creation. But, it is apparent that man has experimented, very early in human history, with different methods that would allow him to record the movement of images.

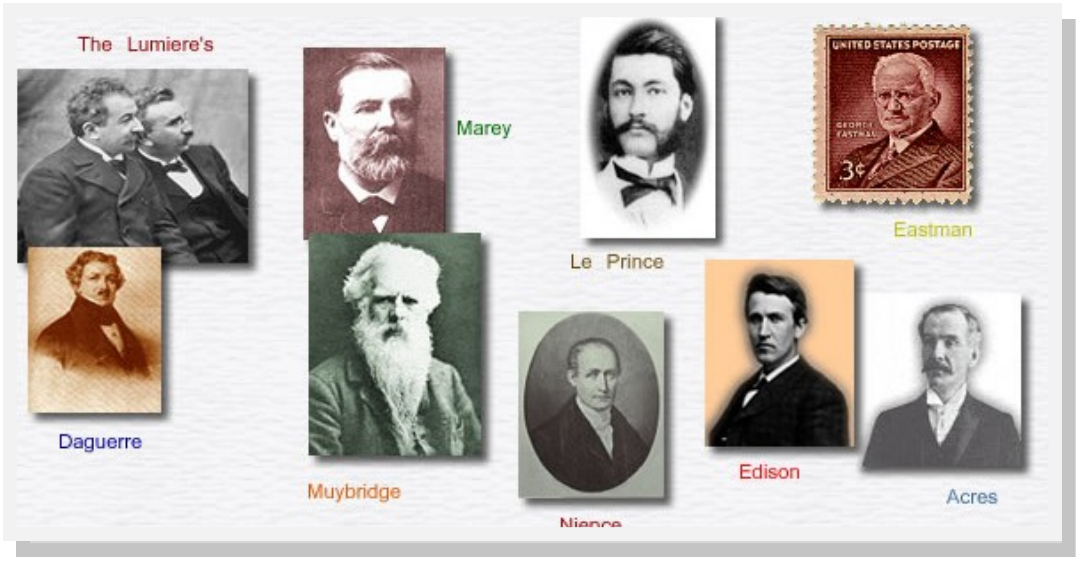

It is very difficult for a researcher to find and pinpoint the one individual that could be named the "father" of cinematography, accepting that the word symbolizes a technique used for motion pictures' creation. But, it is apparent that man has experimented, very early in human history, with different methods that would allow him to record the movement of images. Very closely related to still photography, which has been a catalyst to the development of cinematography since the mid 19th Century, the technique that would allow images to be recorded while in motion has been extensively studied. One of the first attempts to analyze the element of movement with the help of photographic machinery was made by the British photographer

Transframe Team

Edward Muybridge in 1878. After successfully developing a new method of producing consecutive photographic images, he recorded the movement of a running horse. Through the motion pictures he produced, he managed to prove that there are instances when a horse is running that none of its feet touch the ground. Around the same period, the French physicist Etienne Mare managed to capture, also by using photographic machinery that could record 12 images per second, the movements of a flying bird.

Based on the developments of the early 1880s in exposing images on light sensitive elements, attributed to pioneers like Thomas Edison and the Lumiere brothers among others, the new art form of motion pictures introduced a new type of aesthetics that captured the attention of people wanting to explore its applications and create art. One of the first cinematographers that decided to examine this dimension of moving images was the French Maries-George-Jean Mlis who became one of the first cinema directors. With his film, Trip to the Moon (Le voyage dans la lune) in 1901, he created a fantastic story of a trip to the moon using motion pictures. He was also the one that introduced the coloring technique in films by painting each one of the frames by hand.

During the infancy stage of motion pictures, the cinematographer had multiple roles, acting as the director and the person holding and moving the camera. As the years pasted, this new art form was further developed by the new technological tools introduced. New art-related professions emerged and due to cinema's ability to capture the attention of vast audiences worldwide, by appealing to more than one the five senses, cinematography emerged to what is known today as a multi-billion dollar industry and one of the favorite art forms in the world.

पद्धतिबद्ध अभिनय का सौंदर्य

अध्ययन

पद्धतिबद्ध अभिनय का मुख्य सौंदर्य है Aesthetic Pleasure, जिसे हम भारतीय परिप्रेक्ष्य में रस निष्पत्ति कह सकते है। पद्धतिबद्ध अभिनय हमारे जीवन का अभिनय है उसमे हमारा जीवन परिलक्षित होता है। हमारा जीवन रोज विभिन्न रसो से होकर गुजरता है। यदि कहा जाए कि ये रस ही हमारे जीवन की अवस्थाएँ हैं तो गलत न होगा।

प्रवीण सिंह चौहान

+91 9763706428

बीसवीं शताब्दी में रूस के प्रसिद्ध अभिनेता और निर्देशक कोंसटेंटीन स्तानिस्लाव्स्की (1865-1938) ने अभिनय का एक विशिष्ट सिद्धांत प्रस्तुत किया। रंगमंच पर पर्याप्त जीवन व्यतीत करने के बाद उनके मन में यह विचार आया कि अभिनय को एक व्यवस्थित प्रशिक्षण प्रणाली का रूप देना चाहिए। इस विषय पर विचार करते हुए सबसे पहले उन्हे यह लगा कि अभिनेता अपनी रचनात्मक चेतना में पूर्णतः स्वच्छंद होता है और उसकी मांसपेशियाँ सर्वथा तनावमुक्त होती हैं। इसी स्वच्छंद मनःस्थिति को लेकर वह अपने सभी भौतिक उपकरणों का उपयोग, अपनी इच्छा के अनुसार कर पाता है। जब वह रंगमंच पर ध्यानस्थ हो जाता है तो प्रेक्षागृह में कुछ भी होता रहे, उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। अपनी भूमिका के प्रति एकाग्रता के ऐसे ही क्षणों में, उसका अभिनय विशेष प्रभावपूर्ण होता है,जो उसके मन को भी प्रसन्न कर देता है।

स्तानिस्लाव्स्की ने मानसतंत्र का सिद्धांत दिया जिसके निम्न महत्वपूर्ण बिन्दु हैं :-

- मन की सर्जनात्मक दशा
- शरीर की संपूर्ण स्वतंत्रता
- मांसपेशियों की तनाव मुक्ति
- तादात्म्य
- परकाया प्रवेश
- काल्पनिक सत्य
- जीवन का सत्य
- अर्द्धचेतन का प्रयोग

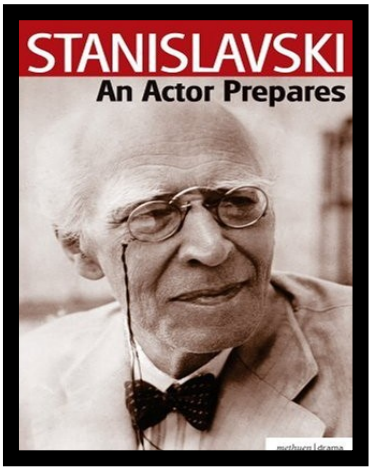

स्तानिस्लाव्स्की का कहना है कि एकाग्रता को प्राप्त करने के लिए, अभिनेता को बहुत पहले रंगशाला में आ जाना चाहिए और अपने को भीड़-भाड़ से अलग कर अपनी भूमिका में खो जाना चाहिए।

यह तभी संभव है जब अभिनेता अपनी भूमिका के चरित्र के जीवन को सत्य मान ले। कोई भी अभिनेता इस दिशा में तभी सफल हो सकता है, जब वह अपने को भीतर और बाहर से तैयार करे। अभिनेता के लिए यह नितांत आवश्यक है कि वह अपने चरित्र की अनुभूति के लोक में प्रवेश कर जाए तथा उसके साथ पूर्ण तादात्म्य स्थापित कर ले : उसकी चरित्रगत विशेषताओं को, वह अपनी चरित्रगत विशेषताएँ बना ले और उसकी अनुभूतियों को स्वयं अपनी अनुभूतियाँ समझने लगे।

स्तानिस्लाव्स्की ने अच्छे अभिनय के लिए कुछ निश्चित परामर्श प्रदान किए हैं। अभिनेता का शरीर और उसकी वाणी पूर्णतः प्रशिक्षित होने चाहिए, जिससे कि वो सभी अपेक्षाओं के अनुरूप तत्काल सचेष्ट हों सकें। अभिनेता को जीवन की वास्तविकताओं का व्यापक बोध होना चाहिए, जिससे वह

प्रभावपूर्ण चेष्टाओं, व्यापारों और वाणी की भंगिमाओं का चयन करके, अपनी भूमिका को प्रमाणिक बना सके। उसे रंगमंचीय तकनीक का भी समुचित ज्ञान होना चाहिए, जिससे कि बिना किसी कृत्रिमता के, अपने को चित्रात्मक रूप में प्रस्तुत कर सके। उसे कल्पनाशील भी होना चाहिए ,जिससे कि अपनी भूमिका के अनुरूप 'भावनात्मक स्मृति' जगाकर, वांछनीय भावो की अनुचेष्टाओं को उपस्थित कर सके। उसे आलेख की भी पूरी जानकारी होनी चाहिए, तभी वह प्रत्येक दृश्य की मूल प्रेरक विचार को समझ सकेगा और अन्य चरित्रों का ध्यान रखते हुए, अपनी सभी प्रकार की चेष्टाओं को संयोजित कर सकेगा। यह सारा कार्य उसे बड़ी एकाग्रता के साथ एवं सुसंगठित रूप में उपस्थित करना होगा, जिससे कि घटनाक्रम क्षण क्षण उद्घाटित होता रहे और सामाजिक यह विश्वास कर सके कि वे उस परिस्थिति में पूर्णतः संभागी हो रहे हैं, जो उनके आगे पहली बार घटित हो रही हैं।

स्तानिस्लाव्स्की ने अभिनय के प्रशिक्षण की अपनी एक प्रणाली भी विकसित की थी। अभिनय कौशल के लिए अभ्यास के सूत्र दिये थे :-

- अगर
- उपस्थित परिस्थितियाँ
- कल्पना
- एकाग्रता
- मांसपेशियों का उन्मुक्त रहना
- विभिन्न विभाग और समस्याएँ
- सच्चाई का विश्वास
- भावनात्मक-स्मृति
- सम्प्रेषण
- बाहरी सहायक

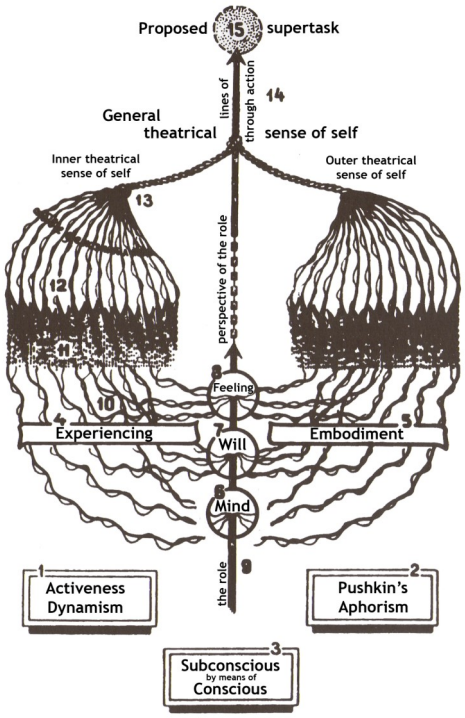

इन सभी का समुचित अभ्यास कर लेने के बाद ही, अभिनेता को बड़े उद्देश्यनिष्ठ रूप में और रचनात्मकता के साथ अपनी कला का प्रदर्शन करना चाहिए। स्तानिस्लाव्स्की का स्पष्ट आदेश है कि रंगमंच पर अभिनेता को अंदर और बाहर दोनों ही रूपों में सक्रिय रहना चाहिए। यह सक्रियता सामान्य रूप में नहीं वरन निष्ठा एवं रचनात्मक प्रवृति के साथ प्रकट होनी चाहिए। रंगमंच के सभी व्यापार एवं चेष्टाएँ भीतर से औचैत्यपूर्ण, तर्कयुक्त, सुसंगत और वास्तविक जीवन में संभव होने चाहिए। अभिनेता को अपने चरित्र को एवं आवेगों को, खेल के रूप में नहीं वरन अपनी भूमिका के चरित्र के मनोभावों के रूप में प्रस्तुत करना चाहिए।

सौंदर्य पर कुछ विचार

दुनिया की सबसे अच्छी और ख़ूबसूरत चीज़ें कभी देखी या छुई नहीं गई, वे बस दिल के साथ घुल – मिल गई।

- हेलेन कलर

एक शख़्स हर दिन संगीत सुने, थोड़ी सी कविता पढ़े और अपने जीवन की सुंदर तस्वीर रोज देखे ... उसे सुंदरता की परिभाषा तलाशने की ज़रूरत ही नहीं, क्योंकि भगवान ने सारे संसार का सौंदर्य उसकी झोली में डाल रखा है। -गोयथे

आंतरिक सौंदर्य का आह्वान करना कठिन काम है। सौंदर्य की अपनी भाषा होती है, ऐसी भाषा जिसमें न शब्द होते हैं न आवाज़।

- राजश्री

सच्चे सौंदर्य का रहस्य सच्ची सरलता है।

- साधु वासवानी

अभिनय एक कला है यह बात सर्वविदित और सर्वमान्य है। और कला मे ही वास्तविक सौंदर्य उद्घाटित होता है। इसके समर्थन में निम्न विचारों को प्रस्तुत करना चाहूँगा :-

'यह एक ऐसा विषय है जिसके अंतर्गत सौंदर्य का सम्पूर्ण क्षेत्र आ जाता है और स्पष्ट रूप से कहे तो इसका क्षेत्र कला का क्षेत्र है'

भारतीय सौंदर्य शास्त्र की भूमिका : डॉ. नागेन्द्र

"Our view is that aesthetic is the science of the expressive (Representative or imaginative) Activity."

क्रोचे : एस्थेटिक ;पृष्ठ 155

'यदि तुम्हें इस प्रश्न का उत्तर पाना है कि सौंदर्य क्या है, अथवा सौंदर्य प्रतीति क्या है, सौंदर्य अनुभव क्या है और वह किस प्रकार वास्तविक अनुभव से भिन्न है तो तुम्हें कला के तीन प्रधान क्षणो के मनोविज्ञान ही का अध्ययन करना होगा। …….. सौंदर्य प्रतीति का संबंध सृजन प्रक्रिया से है। सृजन प्रक्रिया से हटकर सौंदर्य प्रतीति असंभव हो जाती है'।

गजानन माधव मुक्तिबोध : एक साहित्यिक की डायरी (1980),पृष्ठ 20

'असलियत यह है कि सौंदर्य तब उत्पन्न होता है जब सृजनशील कल्पना के सहारे,संवेदित अनुभव ही का विस्तार हो जाए'।

गजानन माधव मुक्तिबोध : एक साहित्यिक की डायरी (1980),पृष्ठ 20

कला ही सौंदर्य है। अभिनय स्वयं एक कला है अतः अभिनय मे सौंदर्य अवश्य होता है।

पद्धतिबद्ध अभिनय मे सौंदर्य

पद्धतिबद्ध अभिनय की निम्न विशेषताएँ ही उसके सौंदर्य को अभिव्यक्त करती हैं :-

* सात्विक अभिनय

* तदात्म्यता

* लय-ताल

* सौंदर्य शास्त्रिक प्रसन्नता [Aesthetic pleasure]

* विरेचन

* प्रेषणीयता

- प्रभावशीलता

सौंदर्य के तीन प्रमुख तत्व माने जाते हैं :-

1. बिम्ब
2. प्रतीक
3. कल्पना

पद्धतिबद्ध अभिनय की प्रक्रिया में उपरोक्त तीनों तत्वों का समावेश होता हैं। अतः अभिनय मे सौंदर्य स्वतः परिलक्षित होता है।

जहां तक सौन्दर्यशास्त्रीय प्रसन्नता की बात है वही हमारे यहाँ रस निष्पत्ति के रूप में परिभाषित किया गया है। अभिनय से रस की निष्पत्ति होती है और यही रस ही सौंदर्य है।

समान्यतः रस सिद्धांत भी भारतीय मनीषा द्वारा निर्मित और विकसित सौंदर्य शास्त्र ही है, जिसमे नाट्य के व्याज से काव्य, संगीत, नृत्य, चित्र, वास्तु आदि सभी कलाओं से संबन्धित आधारभूत तत्वो का निरूपण किया गया है।

निर्मला जैन रस सिद्धांत और सौन्दर्यशास्त्र (1977)

अगर विज्ञान की दृष्टि से देखा जाए तो सौंदर्य के लिए जरूरी है Balance और Rhythm।

और पद्धतिबद्ध अभिनय की विशेषताओं मे एक विशेषता है लय और समरूपता।

निष्कर्ष

निष्कर्ष में मै यह कहना चाहूँगा कि पद्धतिबद्ध अभिनय का मुख्य सौंदर्य है Aesthetic Pleasure, जिसे हम भारतीय परिप्रेक्ष्य में रस निष्पत्ति कह सकते है। पद्धतिबद्ध अभिनय हमारे जीवन का अभिनय है उसमे हमारा जीवन परिलक्षित होता है। हमारा जीवन रोज विभिन्न रसो से होकर गुजरता है। यदि कहा जाए कि ये रस ही हमारे जीवन की अवस्थाएँ हैं तो गलत न होगा। मंच पर अभिनेता का अभिनय हमारे भीतर के रसो को पुनर्जागृत करता है। यही जीवन रस, परानुभूति पद्धतिबद्ध अभिनय का वास्तविक सौंदर्य है।

संदर्भ ग्रंथ :-

Actor training : Alison Hodge ;Routledge pub.

भारतीय और पाश्चात्य नाट्य सिद्धांत :डॉ.विश्वनाथ मिश्र ;कुसुम प्रकाशन

Foreign Language

Why should we learn?

अध्ययन

During the modern age, with globalization at its height, knowing one or two secondary languages has become more than a simple feat of high class and intelligence but also a strict requirement in many occasions. Whether its for professional, social or personal reasons, learning at least one foreign language is a must for anyone that wants to keep his or her head up high in todays society. Lets take a focused look on some main reasons that should turn you towards learning a foreign language.

Whether its for professional, social or personal reasons, learning at least one foreign language is a must for anyone that wants to keep his or her head up high in todays society.

Professional Requirement

This is probably the main reason for which one would learn a foreign language. Many professions require the knowledge of at least one or two foreign languages, depending on the field of the job. Most jobs may ask that you know an international language such as English, French, Spanish or German or a business-specific language such as Chinese, Japanese, Russian and so forth. If youre a native English speaker you may have it a bit easier, since English is the main international language (and one that is present the most often in job descriptions) but knowing a secondary might also prove vital.

Social Bonus

Yes, knowing a foreign language (or more) is definitely a social bonus. Theres definitely a steep hill to climb between being presented as someone that doesnt know any foreign language whatsoever against being presented as a polyglot. Another case when knowing a foreign language can be literally a social blessing is when meeting a foreigner whose language you can speak. Theyll be extremely impressed by your ability to talk with them through their own native tongue, although youre on home grounds and this fact can single handedly create a great impression around you. If the foreigner happens to be part of a business meeting, this impression can turn to a successful business partnership, bringing you both professional and social satisfactions.

TRANSFRAME TEAM

Personal Satisfaction

Learning a foreign language is one of the highest intellectual goals that one could have, on a personal scale. Think about a difficult puzzle, or math problem that takes months if not years of constant studying in order to be solved. The process of solving it may be a hard, arduous one but the yell of joy at the end is well

worth it. Its the same case with learning a foreign language: the learning process is not easy and youll have many small issues and problems to tackle along the way. Youll have to focus on various aspects of the problem, such as spelling, grammar, reading, pronunciation and so forth. If you keep the problem in sight however and if you dont lose interest in it, the chances of solving it are extremely high and the intellectual fulfillment that you get at the end is incomparable to anything else.

Keeping Your Mind Healthy

Its been scientifically proven that by learning a new language, the process stimulates your brain in such a way that it will make you more keen on understanding and learning other subjects, including real disciplines such as math, physics, chemistry and so forth. Learning a new language requires the memorizing and understanding of several thousand new words and concepts, which offers your brain a good training for future occasions where memorizing is a must. After studying a foreign language youll have better results with studying for exams, with information assimilation and generally, with keeping your mind healthy and active even at older ages.

SPIKE LEE

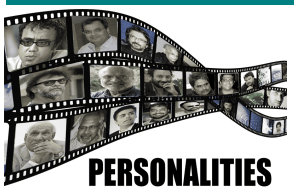

व्यक्तित्व

Spike Lee is one of the most influential and provocative American moviemakers. Recently, he celebrated the 20 year anniversary for the release of his remarkable debut film Shes Gotta Have It. His films are groundbreaking in their controversial approach towards social and political issues and offer different perspective on race, class and gender issues in contemporary America.

Spike Lee was born as Shelton Jackson Lee in 1957 in Atlanta, Georgia to a jazz musician and an art teacher. When Lee was a young child, the family relocated to Brooklyn, which was used as a background for many of Spike Lee's movies. Lee's talent was recognized while he was still a film student in NYU. His thesis film Joes Bed Stuy Barbershop: We Cut Heads won 1983 Student Academy Award for best director.

Spike Lee's name was associated with many controversies. He was often accused of anti Semitism and racism for portraying Jews and Italians in his films a stereotypical manner.

Spike Lee's debut movie Shes Gotta Have It was released in 1986. The movie was shot in 12 days in a budget of 175,000 dollars. The film was written, produced and directed by Spike Lee. Shes Gotta Have It tells the story of Nora Darling, a young, independent African American graphic designer who cannot commit to any of her three lovers. Tracy Camilla Jones played the role of Nora Darling. Tommy Redmond Hicks and John Canada Terrell along with Lee himself played the three men in Noras life.

Shes Gotta Have It was a landmark film in its presentation of African American characters in an American movie and part of the explosion of 80s independent movie industry. The African American community embraced the movie, which displayed a non stereotypical group of young, intelligent black American people. The film won the Prix de Jeuness at the Cannes film festival for the best new film by a newcomer.

The 1992 biographic epic Malcolm X is considered by many as Lee's best film. The 195 minutes movie depicts the story of the African American activist Malcolm X, from his early childhood to his assassination. Lee uses the Malcolm

Praveen Singh

Mumbai

X story to confront the audience with the racial discrimination and violence that black people went through during the 1950s and 1960s in America.

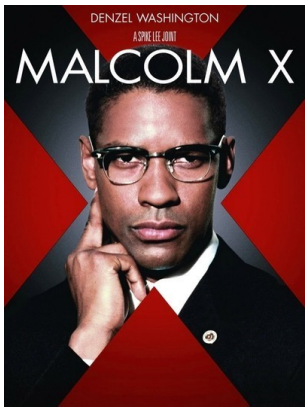

Spike Lee's name was associated with many controversies. He was often accused of anti Semitism and racism for portraying Jews and Italians in his films a stereotypical manner. His 2001 television miniseries about one of the Black Panthers founders, Huey P. Newton, stirred another controversy, which helped establish Lee's image as a provocative and radical figures in the American film industry.

Lee's latest project is the documentary When the Levees Broke: A Requiem in Four Acts, which tells the story of New Orleans post and pre hurricane Katrina. The four hours documentary is about the New Orleans culture, the damage caused by hurricane Katrina and the recovery efforts. Lee does not spare his critic on the government inadequate reaction to the destruction.

5 Top Movies Directed by Spike Lee

Do The Right Thing: this 1989 comic drama shows what happens in Brookline when the interracial tension heats up during the hottest day of the year. Starring- Spike Lee, Danny Aiello, John Turturro.

Mo Better Blues: Denzel Washington as a jazz trumpeter who makes all the wrong decisions regarding his musical career and relationships.

Jungle Fever tells a pessimistic interracial love story between an African American man and an Italian American woman.

Girl 6 looks at the life of a young black actress who prefers working as a phone girl than being abused by movie directors.

25th Hour is dedicated to the last 24 hours in the life of a New York drug dealer before his jail term begins.

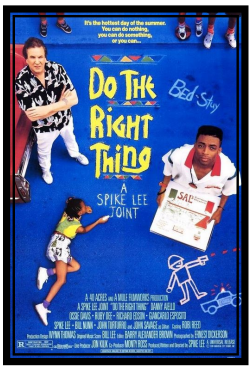

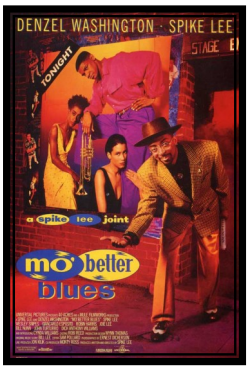

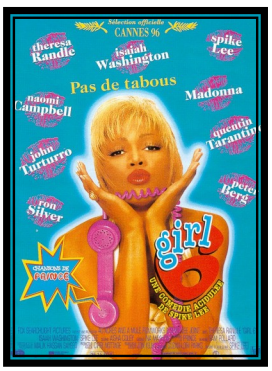

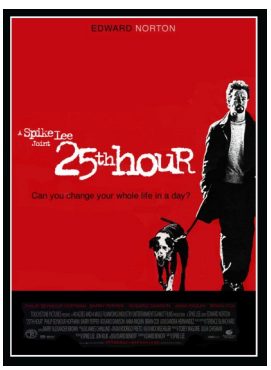

EDWARD SAPIR

AMERICAN LINGUIST

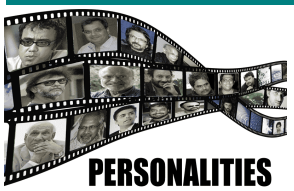

व्यक्तित्व

Adward Sapir, (born Jan. 26, 1884, Lauenburg, Pomerania, Ger.—diedFeb. 4, 1939, New Haven, Conn., U.S.) one of the foremost American linguists and anthropologists of his time, most widely known for his contributions to the study of North American Indian languages. A founder ofethnolinguistics, which considers the relationship of culture to language, he was also a principal developer of the American (descriptive) school ofstructural linguistics.

Sapir suggested that man perceives the world principally through language. He wrote many articles on the relationship of language to culture.

Sapir, the son of an Orthodox Jewish rabbi, was taken to the United States at age five. As a graduate student at Columbia University, he came under the influence of the noted anthropologist Franz Boas, who directed his attention to the rich possibilities of linguistic anthropology. For about six years he studied the Yana, Paiute, and other Indian languages of the western United States.

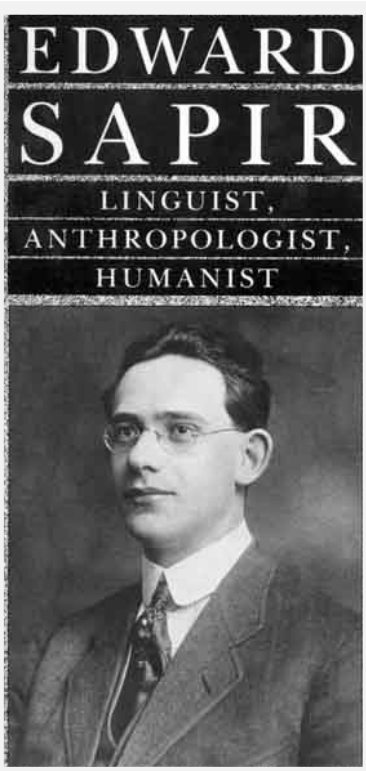

From 1910 to 1925 Sapir served as chief of anthropology for the Canadian National Museum, Ottawa, where he made a steady contribution to ethnology. One of his more important monographs concerned cultural change among American Indians (1916). He also devoted attention to Indian languages west of the continental divide. He joined the faculty of theUniversity of Chicago in 1925 and in 1929 suggested that the vast number of Indian languages of the United States and Canada and certain of those of Mexico and Central America could be classified in six major divisions. In 1931 he accepted a professorship at Yale University, where he established the department of anthropology and remained active until two years before his death.

"Editors of Encyclopædia Britannica"

Sapir suggested that man perceives the world principally through language. He wrote many articles on the relationship of language to culture. A thorough description of a linguistic structure and its function in speech might, he wrote in 1931, provide insight into man's perceptive and cognitive faculties and help explain the diverse behaviour among peoples of different cultural

backgrounds. He also did considerable research in comparative and historical linguistics. A poet, an essayist, and a composer, as well as a brilliant scholar, Sapir wrote in a crisp and lucid fashion that earned him considerable literary repute.

His publications include ***Language*** (1921), which was most influential, and a collection of essays, ***Selected Writings of Edward Sapir in Language, Culture, and Personality*** (1949).

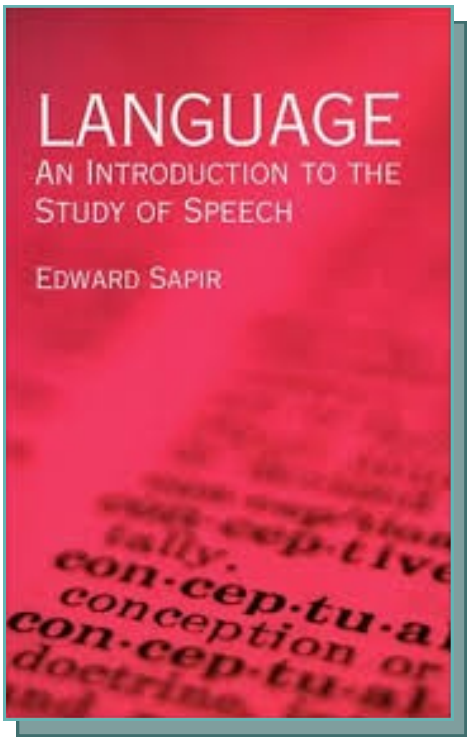

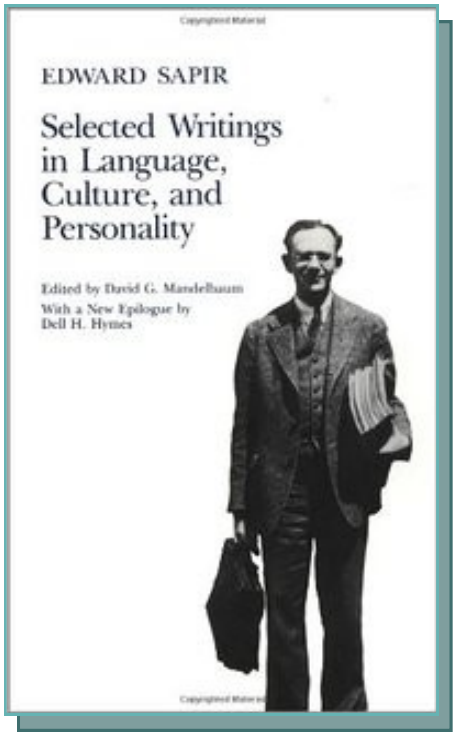

रुस्तम

एक सच जो सामने नहीं आता

समीक्षा

1959 के चर्चित नानावटी केस की कहानी और निर्देशक टीनू सुरेश देसाई की फ़िल्म 'रुस्तम' में साफ-साफ फर्क दिखता है। नानावटी केस के बारे में अमूमन लोगों जितना पता है, उसके आगे की कहानी निर्देशक टीनू सुरेश देसाई ने कहने की कोशिश की है। यह कहानी सिर्फ नानावटी केस के इर्द-गिर्द ही नहीं सिमटी है। इसमें एक ईमानदार देशभक्त नेवी ऑफिसर है, एक अकेली और खूबसूरत पत्नी है, प्यार है, अवैध संबंध है, हत्या है, सस्पेंस है और इन सब से ज़्यादा देशभक्ति का जबरदस्त जायका है और साथ में मीडिया का तड़का भी है। कहानी सिर्फ नानावटी केस के मौलिक घटनाक्रम पर आगे नहीं बढ़ती, बल्कि सिनेमेटिक लिबर्टी के नाम पर इसमें सेना में व्याप्त भ्रष्टाचार और मीडिया के लॉबिंग के खेल को भी दिखाया गया है।

फ़िल्म के स्क्रिप्ट में कई खामियां नज़र आती हैं। निर्देशक और लेखक ने इसे भले ही इसे सिनेमेटिक लिबर्टी मान लिया हो पर ये बातें अटपटी-सी लगती हैं।

कहानी का कुछ अंश नानावटी से प्रभावित है। फ़िल्म में अक्षय कुमार ने नौसेना कमांडर रुस्तम पावरी की भूमिका निभाई है। जहाज पर एक लंबा वक्त बिताने के कुछ महीनों बाद जब रूस्तम घर आता है तो पता चलता है कि उसकी पत्नी सिंथिया (इलीना डीक्रूज) घर पर नहीं है। वह दो दिनों से घर ही नहीं लौटी है। बाद में रुस्तम को पता चलता है कि सिंथिया का विक्रम नाम के एक व्यापारी के साथ अवैध संबंध है। विक्रम, रूस्तम और उसकी पत्नी- दोनों का दोस्त है। इसके बाद रूस्तम अपने सर्विस रिवाल्वर से विक्रम की हत्या कर देता है। फिर थाने जाकर कह देता है कि उसने ऐसा किया। पर आगे चलकर वह अदालत में खुद को निर्दोष साबित करने की दलील देता है और अपना मुकदमा खुद लड़ता है, बिना किसी वकील के। नौसेना की वर्दी खूनी रुस्तम अपने को अदालत में निर्दोष साबित करने की लड़ाई लड़ता है और फ़िल्म अपने मुकाम पर पहुंचती है।

देशभक्ति और राष्ट्रवाद के जिस मुद्दे को लेकर आज देश में चर्चा का माहौल गर्म है, उसका कुछ पुट रुस्तम में देखने को मिलता है। जब नानावटी प्रकरण हुआ था तब ब्लिट्ज के तत्कालीन मालिक-संपादक रूसी करंजिया ने नानावती के पक्ष में अभियान चलाया था। उस प्रसंग की झलक फिल्म में भी है। यहां कुमुद मिश्रा ने 'ट्रूथ' नाम के जिस टेबलायड के मालिक-संपादक बिलमोरिया की भूमिका निभाई है वह करंजिया की भूमिका से मिलती-जुलती है। अखबार रुस्तम को बचाने के लिए उसके पक्ष में ख़बरें प्रकाशित करता है और लोगों में रुस्तम के प्रति सहानभूति पैदा करने की कोशिश करता है। मौजूदा हालत में भी यह बात बेहद प्रासंगिक है। आज भी मीडिया को देशभक्ति और राष्ट्रवाद की परिभाषा तय करते हुए देखा जा सकता है।

फ़िल्म के स्क्रिप्ट में कई खामियां नज़र आती हैं। निर्देशक और लेखक ने इसे भले ही इसे सिनेमेटिक लिबर्टी मान लिया हो पर ये बातें अटपटी-सी लगती हैं। जैसे- गिरफ्तारी के बाद रुस्तम पूरा समय पुलिस कस्टडी में ही क्यों बिताता है? नियम के अनुसार तो मुकदमा के दौरान उसे या तो जेल में होना चाहिए या जमानत पर बाहर। दूसरा रुस्तम को किसी भी प्रकार की तैयारी के लिए वक्त कब मिला। उसने ऑफिसर जेल में जाने से मना कर दिया, लेकिन वह हमेशा अपनी वर्दी में रहा। प्रीति का किरदार एक मौकापरस्त महिला का है, लेकिन न जाने क्यों वह हमेशा कुछ दिखाने को 'उतारू' सी रहती है। अदालत में उसका पहनावा ऐसा है, जैसे कि वह किसी पार्टी से आ रही हो। क्या प्रीति के पास इतना समय है कि वह अपने भाई की मौत की खबर सुनकर चटख रंग की लिपिस्टिक के साथ बाकायदा

रुद्रभानु प्रताप सिंह
मुंबई

कपड़े बदल कर मौका-ए-वारदात पर पहुंचती है। करीब ढाई घंटे की इस फिल्म का लगभग 70 फीसदी हिस्सा कोर्टरूम में ही बितता है पर इन दृश्यों में कही भी बोरियत नज़र नहीं आती। कहानी भागती जाती है और दर्शक उसके साथ जुड़ा रहता है। कोर्ट के दृश्यों को इतनी सहजता और सरलता से दिखाने के लिए लेखक निर्देशक की तारीफ की जानी चाहिए। निर्देशक ने बिना किसी लाग-लपेट के फ़िल्म की गति पर अपना नियंत्रण बनाए रखा है, इसलिए यह फिल्म कहीं भी बोर नहीं करती, सोचने का मौका नहीं देती। लेकिन अक्षय कुमार का अभिनय इन सब से ऊपर है। उनका बेहद सधा हुआ अभिनय फ़िल्म के स्तर को नई ऊँचाई पर ले जाता है।

निर्देशक ने फ़िल्म की डिटेलिंग पर विशेष ध्यान दिया है। 60 के दशक का माहौल दर्शाने के लिए आवश्यक साज-सज्जा और कॉस्ट्यूम्स पर काफ़ी मेहनत की गई है। फ़िल्म रुस्तम के बारे अंत में बस यहीं कहा जा सकता है कि स्क्रिप्ट की तमाम कमियों के बावजूद 'रुस्तम' एक मज़ेदार फ़िल्म है। लेखक-निर्देशक का नज़रिया और अक्षय का साधा हुआ अभिनय फ़िल्म की तमाम कमियों को नज़रअदाज करने के लिए प्रेरित करता है।

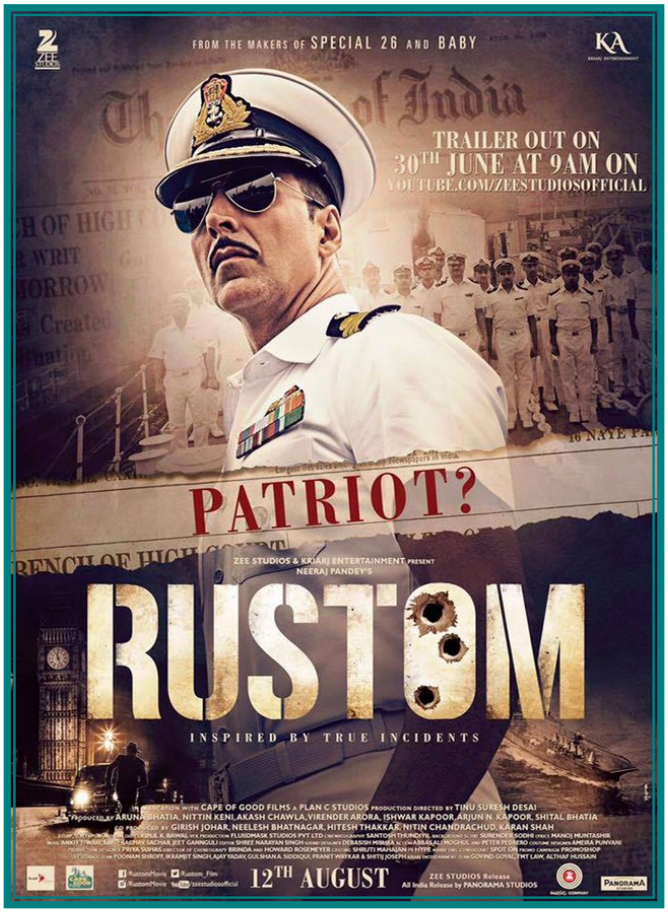

अनुवाद : अवधारणा एवं विमर्श

पुस्तक समीक्षा

समीक्षा

लेखक
डॉ. श्री नारायण
'समीर'

प्रकाशन
लोकभारती,इलाहबाद

प्रकाशन वर्ष
2012

.....अनुवाद को भाषा कर्म कहा जाता है, मगर यह भाषा कर्म कोई सामान्य कर्म नहीं है। मनुष्य समाज की संवेदना, परंपरा, संघर्ष और संपूर्ण जीवनराग भाषा तत्व होते हैं।

-लेखक

डॉ. श्री. नारायण 'समीर' ने अपनी पुस्तक 'अनुवाद एवं विमर्श' अनुवाद के तंत्र में सृजनात्मकता को उसके स्वभाव के रूप में घोषित करने का प्रयास किया। अनुभव, चिंतन और मंथन के मानक पर इस पुस्तक की रचना की। अनुवाद को प्राचीन और एक तरह से अनगढ़ आधुनिक रूप तक की विकास यात्रा को इस में दिखाया गया। वर्तमान समाज में अनुवाद को देखने की दृष्टि बदल गई। भाषा की यात्रा साहित्यिक भाव पक्ष से बुद्धि पक्ष (तथ्यपरकता) की ओर चल रही है। इसके कारण भाषा के सामाजिक पक्ष की ओर भी ध्यान दिया जाने लगा है। भाषा नई प्रयुक्तियों के रूप में आने लगी है। साहित्य के स्थान पर साहित्येतर विषय प्रकाश में आने लगे हैं। आज की सूचना-क्रांति के दौर में अनुवाद समस्याओं के बीच आपसदारी कायम कर करी है। यह सभी भाषा-भाषियों के लिए तथा ज्ञान-विज्ञान के सभी अनुशासनों के लिए अपरिहार्य हो गए हैं। ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में नित नए अनुसंधान हो रहे हैं। इनसे परिचित होने के लिए अनुवाद की आवश्यकता है। इसी परिदृश्य में अनुवाद विषय पर भी नई किताबें आ रही हैं। उसी श्रृंखला में आई है यह नई किताब।

इस किताब में अनुवाद का तात्विक विवेचन, शास्त्रीय विवेचन, पाश्चात्य विद्वानों के विचार तथा व्यावहारिक विवेचन प्रस्तुत है। इस विवेचन के अंतर्गत संक्षिप्त रूप में विषय को प्रस्तुत किया गया है। अनुवाद का इतिहास भी अत्यंत संक्षिप्त देने से विषय स्पष्ट नहीं हो पा रहा है।

वेदों और ब्राह्मण ग्रंथों से जो अर्थ निकाले गए हैं, वे भी सही रूप में प्रस्तुत नहीं हैं। इसे पढ़ने से एक तरह की भ्रामक स्थिति पैदा हो रही है। अनुवाद में विखंडन वाद पर मात्र दो-तीन पृष्ट देकर दूसरे विषय में प्रवेश किया गया है। इससे न विखंडनवाद स्पष्ट हुआ है न अनुवाद के बारे में जानकारी मिली।

संस्कृत साहित्य से आते-आते सीधा भोलानाथ तिवारी और रवींद्रनाथ श्रीवास्तव का ज़िक्र किया गया। बीच के समय में क्या अनुवाद का कोई स्थान नहीं है? क्या अनुवाद का अंधकार युग आ गया था? भोलानाथ तिवारी और रवींद्रनाथ श्रीवास्तव की अपेक्षा हिंदी में और भी अनेक लेखकों ने अनुवाद पर गंभीर पुस्तकें लिखी हैं। उनका ज़िक्र नहीं है। पाश्चात्य विद्वानों के विचार में भी पीटर न्यूमार्क, जूलियाना हाउस आदि की चर्चा ही नहीं हुई, जिन्होंने अनुवाद की पहचान बनाने में और उसे नई दिशा देने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

हिंदी में भी कई ऐसे लेखक है, जिन्होंने हिंदी को पहचान दी। अब अनुवाद पाठ्यक्रम में या प्रशिक्षण इतने विकसित हो गए हैं कि उनमें भोलानाथ तिवारी कि किताब आउट डेटेड हो गई। इसे प्राथमिक स्तर की पुस्तक माना जाता है। Manipulation of Translation के लिए हिंदी पर्याय 'कौशल' दिया गया है, परंतु 'कौशल' के लिए अनुवाद की शब्दावली में Skill शब्द को लिया जा रहा है। कौशल किसी दक्षता पर निर्भर होती है तथा कलात्मकता की अपेक्षा अधिक रखती है, जोड़-तोड़ की कम। जोड़-तोड़ में कलात्मकता कम होती है। इस दृष्टि से अनुवाद कौशल के लिए Skill of Translation प्रयोग करना सटीक रहेगा। अनुवादक से कलात्मक दृष्टि की भी अपेक्षा रहती है, तभी अनुवादक अनुवाद कार्य को सफल ढंग से प्रस्तुत कर सकता है।

डॉ. अन्नपूर्णा सी.
विभागाध्यक्ष
अनुवाद अध्ययन विभाग
म.गां.अं.हिं.वि. वर्धा

इस प्रकार पूरी पुस्तक को देखने से पता चलता है कि इसमें दी गई सामग्री छोटे-छोटे लेखों का संकलन जैसी है।

विषय की सामान्य जानकारी की के लिए किताब को पढ़ा जा सकता है। संदर्भ ग्रंथ सूची में अनुवाद से संबंधित किताबें कम दिखाई दे रही है।

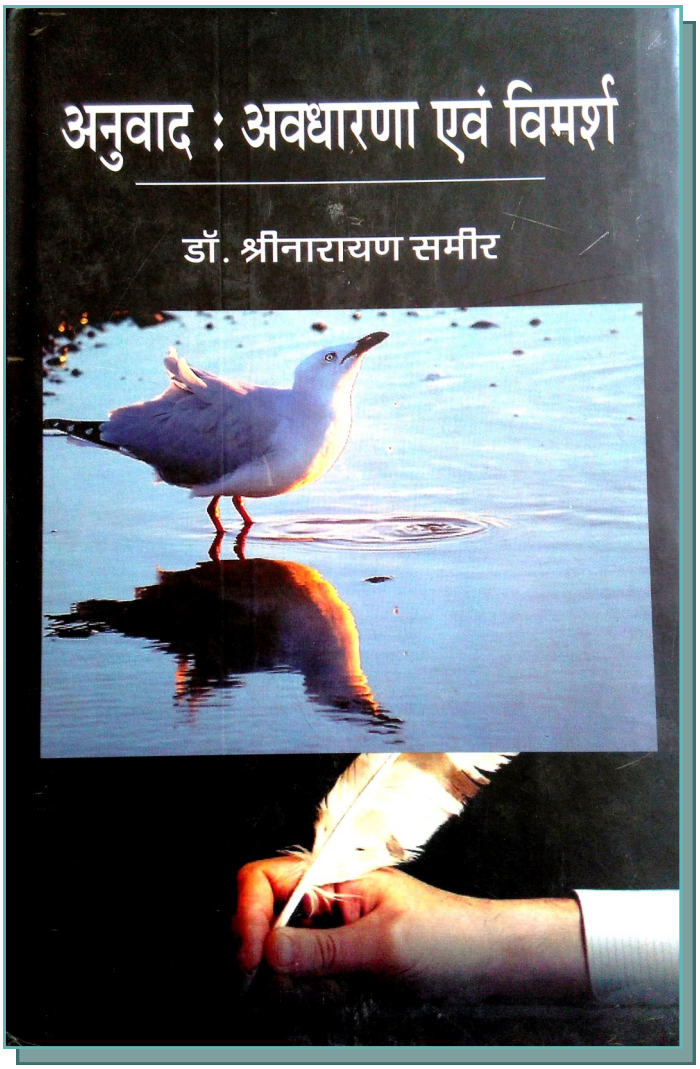

लेखनी

ऋषभदेव शर्मा की कविता - सृजन का पल

CREATION

सृजन

अभिव्यक्ति की इच्छा
सृजन की चाह
अपनी अस्मिता की खोज है केवल!

जब त्वचा छूती किसी भी पुष्प को
दूब, तृण को
रेत को
या पत्थरों को भी,
एक सिहरन दौड़ती सारी शिराओं-धमनियों में
फिर छुएँ
फिर-फिर छुएँ
फिर ना छुएँ
बोलने लगता उमगता रक्त,
वह पल
अभिव्यक्ति का पल
है सृजन का पल !

तैरते हैं रंग यों तो आँख के आगे सभी
पर कभी जब रंग कोई
पुतलियों के पार जाकर स्वप्न
में तिरने लगे
चेतना के गहन तल पर
ऊर्जा का इंद्रधनु खिलने लगे
अवसाद की हर घनघटा चिरने लगे
ज्योति से संकल्प शिव की,
बस वही (पल)
अभिव्यक्ति का पल
है सृजन का पल !

प्राणवाही गंध कोई
प्राण में ऐसी बसे
रागिनी बजने लगे
यों तार साँसों का कसे
मन हिरन व्याकुल फिरे
नित दौड़ता नख-शिख
और थक कर बैठ जाए
नाभि में सिर को धरे,

वह विकलता
दौड़ पगली
वह पराजयबोध,
वह अचानक प्राप्ति का सुख,
बस वही (पल)
अभिव्यक्ति का पल
है सृजन का पल !

आत्मा प्यासी जनम की
खोजती फिरती
नदी, सरवर, कूप
कंठ में काँटे उगाती
ज़िंदगी की धूप

और जब मिलती नदी तो
शब्दभेदी बाण कोई
प्राण-पशु को बींध जाता
प्यास पर मरती नहीं

या कभी सरवर मिले तो
यक्ष कोई सामने आ
प्रश्न सारे दाग देता

ऋषभदेव शर्मा
[पूर्व आचार्य एवं अध्यक्ष
उच्च शिक्षा और शोध संस्थान
दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा,
हैदराबाद]
संपर्क - +91 81 21435033

औ' तृषा कीलित पड़ी
मूर्च्छित तड़पती
खोज जल की नित्य चलती
तब कहीं मिलता कुआँ,
वह झील नीली -
ओक से पीकर जिसे
चिर तृप्ति का अहसास हो
दूध की वह धार निर्मल
वह सुधा से सिक्त आँचल

बस वही पल
अभिव्यक्ति का पल
है सृजन का पल !

टूटता है मौन
सीमा टूटती है,
देह घुल जाती दिशाओं में
और केवल शून्य बचता है- विदेही,

शून्य में से जब प्रकटते शब्द तारे
बस वही पल
अभिव्यक्ति का पल
है सृजन का पल !

एक दुर्लभ पल वही मुझको मिला था
आज तुमको सौंपता ,
स्वीकार लो निश्छल,
बस यही पल
अभिव्यक्ति का पल
है सृजन का पल !

तुलिका

CREATION

सृजन

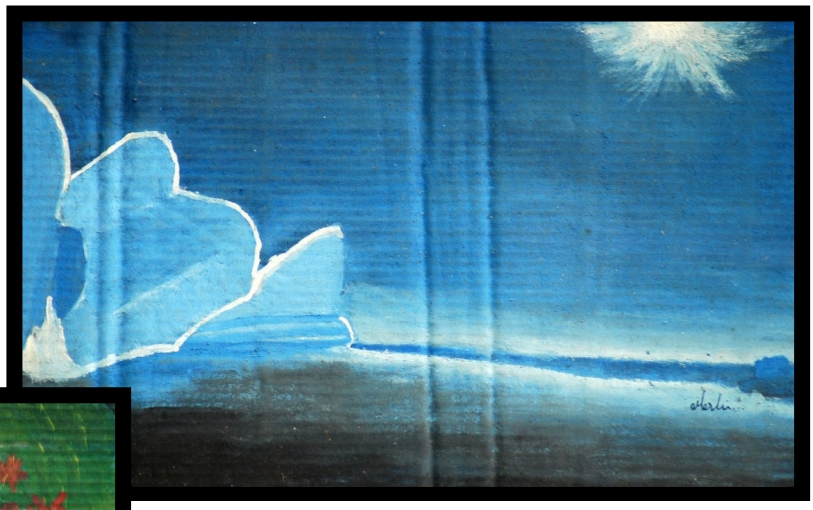

MERLIN FROM MUMBAI

कैमरा

CREATION

सृजन

SHASHIRANJAN KUMAR KUSHWAHA
BIHAR

An Interview with Dr. RamPrasad Bhatt

Professor for German at Hamburg, Germany

बात-चीत

***Dr Ram Prasad ji, would you please introduce yourself to our readers*!**

(Please brief yourself)

A. I was born in Tehri Garhwal, Uttarakhand and lived in Mussoorie for over 12 years. Since 2001 I am living in Germany and teaching at the University of Hamburg. Before joining the University of Hamburg as a permanent faculty member in 2003, I taught Hindi at the University of Leipzig and at the University of Munster. Currently, I am teaching Hindi language, literature and the socio-cultural developments in contemporary India. My main interests of research are the fields of Hindi language (historical Grammar of Hindi, social -linguistic), Hindi literature (at present, I am working on the portrayal of Indian family in Hindi literature) and the oral tradition of Himalayas and North India.

Many Hindi short stories and novels have already been translated into German. The literature of Mahatma Gandhi and Tagore are already available in German language. Hindi movies and Documentaries are also being translated into German.

How many languages do you know and teach?

A. Well, Garhwali and Hindi are my mother tongues. I am fluent in English and German and have a good knowledge of Sanskrit as well as Urdu. Apart from that, I work with languages such as Kumaoni, Nepali and Latin. I hope, one day I will be able to learn Bengali, Persian, French and a south Indian language. Languages are indeed the crucial entry point of understanding a society and its culture.

How did you develop your interest in German studies? And how do you see the link between German and Hindi as language?

Interviewer:

Ms. Latika Chawda

latikac1986@gmail.com

A. I am not a student of German Studies. I am rather an Indologist, teaching and researching modern India. While studying at Mussoorie I joined the famous Landour Language School, Mussoorie as trainee teacher for Hindi Grammar in 1994 where the well-experienced teachers of the school trained me until 1996. After successful completion of two years as a trainee, I began teaching Hindi to the students coming from various European and American Universities. The Landour Language School is known for its language teaching, especially, Hindi, Urdu, Garhwali and Sanskrit. Hundreds of American, European, Australian and other students from the globe flock to Mussoorie every year to learn Hindi. In year 2000, I invited by some colleagues from Germany to teach Hindi to a group of students for some time that is when I deeply became interested in Indology. And as the opportunities kept pouring in I decided to stay in Germany for some time but later on I liked the system, people and culture here so much so that I made Hamburg, Germany my permanent residence.

It is well known that both the German and Hindi belong to the same group of language family, namely, to the Indo-European languages. There are evident phonetic and lexical similarities and etymological and linguistic affiliations between German and most modern North Indian languages. German and Sanskrit unlike Hindi have three Genders – Masculine, Feminine and Neutral. In Hindi Neutral Gender is lost. Sanskrit lexis like 'pitri', 'maatri', 'bhraatra', 'ratha', 'aksha' are 'Vater', 'Muter', 'Bruder', 'Rad', Achse'. I am sure; you know that the German Indologists have contributed a lot to Indological studies. Today, Germany is the exporter of Indologists worldwide. In fact, it was a German speaking Dutchman Mr. Ketelaar, who wrote the very first Hindustani Grammar in Surat in 1698. Today, Hindi, Yoga, Hindi Cinema have become part of German life. Today we can watch Hindi movies on German TV. Holi and Diwali festivals are celebrated at grand level in various German cities. Just this month a new TV channel – Zee One - has been founded that only shows Hindi movies in Germany, Austria and Switzerland all day long. The Indian national anthem was for the first time sung in the Atlantic Hotel in Hamburg by the followers of Subhash chandra Bose in his presence in 1942 when the German-Indian Society was founded. There are various historical philogical, philosophical, cultural and economic links between Indian and Germany.

Where have you studied/did your Ph.D.? What were your topics?

A. After completing my schooling in Tehri Garhwal I went to Mussoorie, where I obtained my higher education from Garhwal University. I have obtained a B.A., M.A. B.Ed. degree and P.H.D from

Garhwal University. My doctoral thesis was on "टिहरी बाँध के डूब-क्षेत्र के लोक-गीतों का सांस्कृतिक अध्ययन" – "A Cultural Study of the Folksongs of Tehri Dam Submerged Area". The Tehri town that was the socio-cultural, economic, political and administrative center of the Tehri Garhwal district does not exist anymore. Over a hundred thousand people were displaced from that area. Therefore, studying those people and their cultural heritage was a matter of great privilege.

What is your opinion regarding Hindi as a language?

A. Hindi, as we all know, is the daughter of Sanskrit. It's one of the most scientific languages, just look at the order of the syllable (alphabets). It's a language that is written as spoken and spoken as written. Hindi is one of the easiest languages. Most of our students learn Hindi alphabet within two weeks and within one year most students usually complete the Hindi Grammar course. Of course, there are some sounds e. g. क़ ख़ ग़ ज़ फ़ are not available in Hindi but have been borrowed from Persian and Arabic. In some areas Hindi is much more precisely elaborated than German and English, e. g. the vocabulary related to relatives and the odors and fragrances, just to name a few.

What difficulties do you face while translating any text/poetry or any genre in Indian context to European context?

A. The very first problem with Hindi texts is that they contain lots of orthographical problems. For example, direct speeches ae mostly not marked, commas and semicolon also create problems and the borrowed sounds are also not marked such as Persian-Arabic alphabets – if you write zarā ज़रा as jara जरा the meaning is changed from 'a little' to 'old age' or 'decrepitude', and zamānā ज़माना as jamānā जमाना the meaning will change from 'period' or 'age' to 'to freeze', 'to coagulate' or 'to adhere'. Translating the tenses, the compound verbs and the nuance of the word into German is not easy. Translating Hindi works from English into German and German into Hindi from English always lead to misappropriations and misconceptions. Apart from that, translating the socio-cultural nuances of the term is not easy at all.

As per your knowledge, what steps are being taken in Germany regarding technical advancement or Machine Translation from German to Hindi and Hindi to German?

A. To my knowledge to date there are not many efforts being made regarding technical advancement, I

mean for the Machine Translation from German to Hindi or vice-versa in Germany.

What do you feel is the status of Hindi/Bharat in German language you teach in?

A. At present over 15 German Universities are teaching Hindi. About 15 years back over 18 German Universities taught Hindi. The new development is that Hindi is gaining popularity among the general masses which was not the case just about 10 years back. There quite a few private institutes, e. g. in Hamburg, Berlin, Munich, Frankfurt and Koeln teaching Hindi. Now we can watch Hindi movies on German television and see Hindi written at some German Airports, in some museums and shops. This shows that since past few years Hindi also gained momentum in Europe too. Prime Minister Modis speeches also have contributed to the popularity of Hindi within India but also outside India. But the popularity does not mean much. As long as Hindi does not become the language of the bread provider people outside India won't take it that seriously. Most of our students always complain that when they are in India almost no one want to speak Hindi with them. They always get the answer in English even from an Auto-rickshaw driver when they explicitly ask the question in Hindi. The image of India is overall good. Many Germans are very much interested in Indian culture, yoga, Indian food and clothing. Meanwhile one can buy Indian food even in a number of German supermarkets. Indians are seen as hard working people and India as strongly growing economic power. But the problems such as communal conflicts, poverty, caste and gender based discriminations are also the themes of general discussions.

Is 'Indology' the subject pursued at University level in Germany?

A. The courses in Indology are only taught at University level. At some Universities courses at BA, MA and PhD level are taught. Almost 14 Universities teach modern India, that means Hindi as a main language, at BA level.

What is the scope for Hindi translators in Germany?

A. There is a great scope of translation from Hindi into German. A lot is already being translated. Many Hindi short stories and novels have already been translated into German. The literature of

Mahatma Gandhi and Tagore are already available in German language. Hindi movies and Documentaries are also being translated into German. I myself together with my students have so far translated over 15 Hindi short stories – from Premchands 'duniya ka anmol ratan and Chandradhar Sharma Guleri's 'usne kaha tha' to Ravindra Kalias 'akahani' and Ganga Prasad Vimal's 'bachcha'. Hindi poetry is also being translated into German.

How do you see 'Translation' on global level?

A. Translation is mean of interlingual communication which has a kind of polysemantic nature. It is certainly not just an interlinguistic process or replacing a source language text into target language text as it includes the socio-cultural and educational nuances that generally shapes the attitudes and understanding of the recipients. Translation necessarily involves at least two different languages and cultural traditions and plays a crucial role in our understanding of the cultural 'other'. The role of a translator in mediating the source ideas, experiences, thoughts, know-how and culture across socio-cultural and geographical boundaries is absolutely important thus it is imperative that the translator knows both of the languages involved. The literature being written in Indian languages is still almost unknown to European readers, therefore, more translations from Hindi into German, English and into other European languages need to be promoted at various levels.

*Thank you for giving the interview for "**Transframe**".*

Interviewer: ***Ms. Latika Chawda,***
Ph.D. Research Scholar, MGAHV, latikac1986@gmail.com
Interviewee: ***Dr. RamPrasad Bhatt, Germany***
University of Hamburg
Dept. of Culture and History of India and Tibet
Alsterterrasse 1, 20354 Hamburg, Germany
Tel.: 0049-40-42838-3388
Fax: 0049-40-42838-6944
Email: Ram.Prasad.Bhatt@uni-hamburg.de

नाप-तौल की जिंदगी

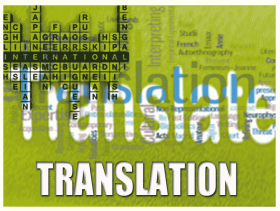

अनूदित

इस बार अनूदित स्तंभ में आपके समक्ष प्रस्तुत है- सी. सुजाता जी की तेलुगू कहानी का हिंदी अनुवाद

दफ्तर की छुट्टी हुई। बारिश तेज़ हो रही थी। कहीं बस न निकल जाए इस चिंता से कैंटीन में खड़े-खड़े चाय पीते समय सुंदरम ने वह प्रपोजल रखा। ऐसा लगा जैसे चेहरे की शिराओं में खून तेज़ी से दौड़ रहा हो। लेकिन इसके अलावा और कोई अनुभूति नहीं हुई।

"तुम्हें मंजूर है न?"

उसने आतुरता से पूछा। क्या कहती, बस सहमति में सिर हिला दिया। उसके चेहरे पर मुस्कुराहट की झलक दिखाई दी।

"अच्छा! फिर मिलेंगे।"

माथे से बहते हुए पसीने को पोंछते हुए उसने कहा और हाथ हिलाते हुए बारिश में पैदल चला गया। मैं वही खड़ी थी। 'तुम कैसे जाओगी?' यह भी नहीं पूछा। उसके इस तरह हड़बड़ाहट में चले जाने पर पहले मुझे झल्लाहट हुई। क्या कर सकती हूँ? उसका स्वभाव जानती तो हूँ। उस पर क्रोध करना व्यर्थ है। थोड़ी देर बाद लगा कि सुंदरम के बारे में प्रेम से, पोइटीकली और रोमांटीकली सोचूँ।

मुसलाधार वर्षा..... किसी के न होने पर एकांत..... उस सुंदरम के आने से मेरे विचारों में अचानक अवरोध आया। किसी के न होने का एकांत अब कहाँ ? कल्पनाओं के लिए अवसर कहाँ? कैंटीन का रसोईया वहाँ स्टीरियोफोनिक आवाज़ में कामवाले पर चिल्ला रहा था।

"चाहे मैं मर जाऊं पर ग्लासों के लिए इतनी बारिश मैं बिलकुल नहीं जाऊंगा।" कामवाला कहने लगा।

"नहीं गए तो तुम्हें इनता पीटूँगा कि मर जाओगे।" रसोइए ने कहा।

उसी नेपथ्य में सुंदरम का प्रपोजल मेरे कानों में गूंज गया। गरम–गरम चाय पीते हुए किसी मधुर कल्पना में खो जाने की सोचती, लेकिन मेरा ध्यान बार-बार उस गंदे कैंटीन की ओर या फिर सिंक में गिरे हुए जूठे गिलासों की ओर जा रहा था। कोई फायदा नहीं हैं। मैं यह समझ गई कि मैं कवि हृदय नहीं हूँ।

या फिर ऐसा करूँ कि कहानियों और फ़िल्मों की तरह चांदी की पायल के बारीक घुंघरू दिखाते हुए, बारिश के पानी में पैर भिगोते हुए, ख्यालों में खोती हुई, बारिश में चलती जाऊँ। पहनी हुई इस्त्री की साडी इस वर्षा में भीगकर खराब हो गई तो? इस्त्री करवाने के लिए ही बहुत सारे पैसे खर्च हो जाते हैं। एक ही गहरी साँस में अभिनय के इस अंश को यदि फुलस्टॉप दे दूं तो सामने सारी समस्याएँ ही हैं।

'अगले महीने हम अपने घर चलेंगे विजया।' सुंदरम ने कहा।

गनीमत है उसने 'मुझसे शादी करोगी?' ऐसा सवाल न पूछकर अच्छी तरह से कहा। क्या जाना ? शहर

डॉ. अन्नपूर्णा सी.
विभागाध्यक्ष
अनुवाद अध्ययन विभाग
म.गां.अं.हिं.वि. वर्धा

से दूर कहीं किसी कमरे में रहता है। उस कमरे में उसके साथी दो और शतमर्कट के समान, वहाँ कोई फायदा नहीं है।

अब तो नया घर ढूँढ़ना ही होगा। वह भी ऑफिस के पास हो तो बहुत ही अच्छा होगा। यह इतनी पॉश लोकैलिटी है, किराया इतना ज़्यादा। पहले वह लेडिज हास्टल का कमरा खाली करना होगा। अब तक इधर-उधर रसोइए के द्वारा बनाया हुआ खाना खाने के सिवाय मुझे खाना बनाना ही नहीं आता। सुंदरम से शादी करने के बाद सुबह उठकर खाना पकाकर, खाकर, सफाई करके.....

फिर से खयाल कहीं-से-कहीं पहुँच रहे हैं। आराम से सुंदरम से शादी हो रही है। यह बेकार का खाना – खज़ाना क्यों - - , - - छि छि - - क्या यही है मीठे ख़याल ? मज़े से मैं और ..वे..... फूलों में फूल.....।

देर शाम दफ्तर के काम से व्यस्त रहने के बाद घूमने जाने का और बाते करने का समय होगा? एक पल के लिए मुझे अपने आप पर क्रोध आया। तीन साल से पीछा न छोड़ने वाले विचारों को तथा मित्रता को आज सुंदरम ने बातों में बदला - - - - उस खुशी को ख़यालों में बदल पाई ? सुंदरम ने वह बात जिस प्रकार कही वह याद आते ही मैं अपनी हंसी को न रोक पाई। नर्वस होकर कांपते हुए हाथों से उसने जिस तरह मेरी और देखा और हमेशा धौंस जमाते हुए बोलने वाला उस व्यक्ति का धीमी आवाज़ में मुझसे बात करने का वह तरीका याद करके मुझे और भी हंसी आई। अब अपने विचारों को वहीं रोककर, वर्षा की चमचमाती हुई बूंदों को, बूँद गिरते ही कांपते हुए उस कोमल पत्तों को, पत्तों से नीचे गिरती हुई पानी की बूंदों को देखते रहने से फिर से मन में काँटों की तरह चुभती हुई वही चिंता।

“क्या मुझमें रसिक हृदय नहीं है? क्या मुझे प्रेम की अनुभूति हुई ही नहीं ? यह अनुभव इतना नीरस होता हैं क्या ? एक बात तो कह सकती हूँ, शादी के बारे में मीठे सपने देखने से ज्यादा, सुबह उठकर खाना बनाना, घर का सारा काम करना, इसी का डर मुझे ज्यादा खाए जा रहा है।”

एक महीना जल्दी ही बीत गया। घर ढूँढ़ना इधर मेरे माता-पिता उधर सुंदरम के माता-पिता सबका आना, खुश होना, सभी लोगों का मिलजुल कर खुशी-खुशी खाना खाते हुए भी ‘इन दोनों की कमाई इस शहर में किराये के घर के लिए, भोजन के लिए ही काफी होगी’ यह सब हिसाब आदि करना, यह सब सुनकर मैं तो और भी चिंतित हुई। रजिस्टर ऑफिस से बाहर आने के बाद, सबने जब अपना-अपना रास्ता पकड़ा, तब दोस्तों के द्वारा दी गई बधाईयों में सिर से पैर तक भीग गए। बाते खत्म होने के बाद, जब वे लोग चले गए तब हमारे नए घर में केवल मैं और सुंदरम ही बचे।

“कैसा है, विजया ?”

सुंदरम ने कांपते हुए पूछा।

“ बहुत अच्छा है, खुश हूँ ”

अपने दोनों हाथ ऊपर उठाकर घरभर में दौडकर यह बात कहनी चाही। पर पूरा घर अस्तव्यस्त था। सुंदरम के कमरे से लाई हुई बाल्टियाँ, चटाइयाँ, तकिया, मेरे हास्टेल के कमरे को खाली करके लाया हुआ सामान, दोनों ने मिलकर खरीदे हुए बर्तन, डिब्बे आदि से पूरा कमरा अस्तव्यस्त था। कमरे में दौड़ने की इच्छा को दबाकर मैंने थकान से पूछा

“अब यह सब तरीके से रखना है?”

सुंदरम ने घबराकर चेहरा पोंछते हुए हडबडाकर कहा

"नहीं-नहीं ! यह सब ऐसे ही रहने दो। हम बाद में देखेंगे - - - - थोड़ी देर के बाद देखेंगे।

छोटी सी रसोइ, एक छोटा सा कमरा बाद में कैसे होगा ? दोनों ने दांत भींचकर सारा सामान जहां का तहां दीवार से सटाकर रखने के बाद झाड़ू लगाकर सेटिल हो जाने की सोची, इतने में ही उसे याद आया कि घर में ना तो पंखा लगाया और ना ही लाइट ! पैकेज बक्से में से निकाले गए पंखे के सभी पीसेस अलग हो गए हैं, यह जानने के बाद हमने अपने आप को कोसा और वह सब बाहर निकाल कर उस अँधेरे में इलेक्ट्रीशियन के लिए जाकर जैसे-तैसे पंखों और लाइटों को साधा। अच्छा हुआ कि बीच में भूख लगने के कारण खाने की बात याद आई। लौटते हुए टिफिन के बहुत सारे पैकेट लेकर आ गए। जम्हाइयाँ आने तक हमारे केंटिन के टिफिन में और इस होटल के टिफिन में अंतर के बारे में, बजेट के बारे में भी बाते की। ज़िंदगी के दिन उसके बाद तेजी से दौड़ने लगे और क्यों नहीं दौडेंगे। देर रात तक जागते रहना, सुबह ना उठ पाना, खाना बनाना तो क्या, कम-से-कम कॉफी बनाने तक का समय ना होने के कारण ऑफिस के लिए दौड लगाना। फिर समय क्यों नहीं दौड़ेगा ?

कभी-कभी बिना कहे कोई ना कोई दोस्त आ टपकता। दोनों उनसे होड लगाकर बाते करते। चाय बनाने के लिए, जूठे कप धोने के लिए, कई बार बात तलाक तक पहुँचती। हर एक पुस्तक जो दिखाई देती, उसे अद्भूत मानकर खरीदकर केवल चटनी के कौर खाकर ही कई दिन बिताए।

इन झगडों और मिलन के बीच ही एक दिन मुझे सुस्ती हुई। मेरा सिर चकराया, कमज़ोरी के कारण गिर गई, सुंदरम को बहुत घबराहट हुई। दोनों अस्पताल की ओर दौड़े। वहाँ सुंदरम की रोती सूरत देखकर डॉक्टर ने कहा "यह कोई बीमारी नहीं है, पथ्य आदि करने की कोई ज़रूरत नहीं है। विजया एक बच्चे को जन्म देने वाली है।" यह सुनकर सुंदरम का चेहरा खिल उठा। दोनों बस स्टॉप में खड़े थे। भीड़ से भरी बस को देखकर सुंदरम ने पूछा

"ऑटो में चले क्या ?"

तीन दिन से पहले तो वेतन नहीं मिलेगा, दोनों ने सोचा।

"तुम्हें कैसा लग रहा है, विजया ?"

सुंदरम ने मेरे चेहरे की ओर आत्मीयता से देखकर पूछा। मैं कुछ कह पाती इससे पहले मेरी आँखें भर आई थी। सुबह ही उल्टी शुरू हुई तो फिर ऑफिस का काम कैसे होगा ? वेतन की कटौती पर छुट्टी लेने से कैसे चलेगा ? यह मेरे मन में आया हुआ विचार। जिस पल मुझे यह पता चला कि मैं माँ बनने वाली हूँ, उसी पल मुझे हिला देने वाली चिंता, आने वाले बच्चे के लिए नई कल्पनाएँ यहीं हैं क्या ? बाप रे ! यह जीवन इतना कडवा कैसा है! यही बात सुंदरम से कहने पर "इसीलिए तो गर्भवती स्त्री खट्टा खाना पसंद करतीं हैं।" सुंदरम ने एक बेकार सा चुटकुला फेंका।

विश्वास कीजिए , इसके बाद जैसे समय बहुत मुश्किल से कटने लगा। ऑफिस के काम से मैं थक जाती तो सुंदरम घर का काम , मेरे नखरे आदि सब कुछ सहता। किसी तरह से समय बिताया। बच्चे की पोजीशन कैसी है, स्वस्थ है कि नहीं, स्कैनिंग करनी ही होगी, डॉक्टर ने कहा।

बेटी ही होगी, किस समय होगी, कितने बजे होगी, यह सब हिसाब आदि पहले से ही पता चल जाने पर फिर इंतजार करने में क्या मज़ा है ? रंगबिरंगी सपने, बिना किसी चिंता के बहुत ही आसानी से दिन बीतते गए। दो दिन में मेटरनिटी लीव लेने की सोचते ही मेरे वीक्ली ऑफ, त्यौहार की छुट्टी दोनों एक के बाद एक आ रहे थे । दोनों के बीच एक वर्किंग डे भी था, ये दोनों लीव

में जाएँगी। ऐसा सोचने लगी। सुबह से ही थोड़ी बहुत सुस्ती थी। किसी भी समय डेलिवरी हो सकती है, डॉक्टर के ऐसा कहने पर भी उन दो दिन की छुट्टियों को बचाने के लिए किसी तरह दफ़्तर पहुंची। चेहरे पर जबरदस्ती मुस्कराहट लाकर रजिस्टर में हस्ताक्षर करके ओठ भींचकर ऑफिस का काम करने लगी। काम करते-करते पसीना छूटा। पेट में हिलने की आहट सी हुई। दो दिन की छुट्टी के लिए कितनी मुसीबत --- हे भगवान! किससे, कैसे पर्मिशन माँगी, किस भाषा में अपना दुखडा सुनाया, पता नहीं। किसी तरह अस्पताल पहुंची।

"थोड़ी-सी भी अकल है तुझे ? इस तरह डेलिवरी के दिन नजदिक आते हुए भी ऑफिस जाती हो?" इस तरह की डांट-फटकार सुनते हुए ही मैंने बेटी को जन्म दिया।

सुंदरम और मैंने मिलकर थोड़ी देर बेटी के बारे में बात की। अस्पताल के बिल, दूसरे अन्य खर्च , नए सामानों को लाने की लिस्ट के बारे में घंटो बातें की। सुंदरम की माताजी हमारी सहायता के लिए आ गईं। थोड़े दिन रहकर जाने की सोच रही थी। बच्ची की देखभाल , घर की ज़िम्मेदारी ज्यादा तर उन्होंने ही संभाली। छुट्टी जल्दी ही खत्म हो गई। ऑफिस का काम फिर से शुरू हुआ, दो घंटे में एक बार बच्ची को दूध देने का मन करता। उसके छोटे-छोटे हाथ, दूध पीने के लिए आतुरता इन सब की याद आने से मैं बेचैन हो गई। शाम होते ही कमज़ोरी होने लगी। घर पहुँचते ही सासुमाँ गरम-गरम कुछ खाने को देती। मैं और सुंदरम छोटे बच्चे की तरह किलकारियाँ मारते हुए बच्ची से खेलते।

उसके बाद उस खेल में मज़ा न आता। एक ही कमरा था। उसीमें ही मैं, बच्ची, सुंदरम और सासू माँ। दरवाजा खोलते ही बाहर की गली का रास्ता दिखता था। मुझे और सुंदरम को पांच मिनिट का एकांत भी न मिल पाता। बेचारी सासू माँ, सब कुछ समझती, पर क्या करती?

"ऑफिस से घर आते ही जीवन नीरस लग रहा है, विजया।"

कहते हुए सुंदरम गहरी साँस लेता। मैं क्या कहती --- कितना भी मना करें, कितना भी समझाएँ --- समस्या तो वही है न। सासू माँ चली गई तो बच्ची को कौन देखेगा ? इस सिकुड़े से कमरे में कितने दिन और कैसे जीएंगे ? ससूरजी कितने दिन तक अकेले खाना पकाकर खाएंगे और ट्युशन पढ़ाएंगे। जिंदगी हमें हमेशा एक प्रश्नवाचक चिह्न की तरह आँखों के सामने दिखाई देती।

"बच्ची को मैं ले जाऊँ क्या ?" सासू माँ ने पूछा। मैं चौंकी, पांच महीने में ही मुझे पहचानकर मेरे ऊपर गिरने वाली यह बच्ची..... अपनी बच्ची के विकास को देखे बिना ही सासू माँ के साथ भेज दूँ ?

स्कूल टीचर की नौकरी से सेवानिवृत होकर ट्यूशन के बिना न चलने वाली जिंदगी बिताते हुए ससूर। ठीक से साँस न ले पाने के कारण नरक का अनुभव करती हुई दमे की मरीज माँ। पिताजी की कम कमाई के कारण नित्य दरिद्रता से भरा हमारा घर। इन सभी समस्याओं से बढ़कर हमारा यह सिकुडा सा घर। मेरे जीवन में अनमोल यदि कुछ है तो वह हमारी बेटी और दूसरी सुंदरम से मित्रता।

तोल के अनुसार, मिली हुई कमाई को माप कर इस नौकरी के बोझ को उठाने से जो थोड़े बहुत रूपये मिलते हैं, वही हमारा आधार था। महंगी चीज़ हमारी पहुँच से परे थी। बचपन से ही सब के साथ समझौता करना सिखाया गया।। अपनी बच्ची को अपने साथ रखना जरूरी है? सुंदरम को और मुझे जो एकांत मिलेगा वह जरूरी है? सासू माँ का बच्ची के साथ जाने से जो खर्च घटेगा वह जरूरी है? यह सब सोचते ही दुःख उमड़ पड़ा। सुंदरम की माँ और मेरी बच्ची दोनों ही हमारी जिंदगी में बोझ हैं? सुबह उठकर सासू माँ ने बच्ची का और अपना सामान बाँधा। मैं रो पड़ी।

"तुम्हे कोई चिंता करने की जरूरत नहीं है, मैं तुम्हारी बच्ची को देखभाल करुँगी न, गाँव में इतना खर्च नहीं होता।" सासू माँ ने कहा।

मैं कुछ भी न बोली। मेरे आँसू न रुके। मैं क्यों रोई, मुझे पता है। सुंदरम और मैंने जाकर उन्हें बस में बिठाया। बच्ची को उनके साथ देखकर दिल में किसी को न दिखनेवाला गहरा घाव हुआ। अब पूरा घर खाली था। सुंदरम और मेरे लिए यह एकांत अति हो गया। ऑफिस से आते ही थोड़ी देर चटाई पर लेटकर कुछ सोचने के बाद, सुंदरम ने कहा, "यह ज़िंदगी एकदम शून्य हो गई, विजया।"

मुझे पता है, यह शून्य क्या है ? क्यों है ? बस उसकी पूर्ति का मार्ग ही नहीं पता।

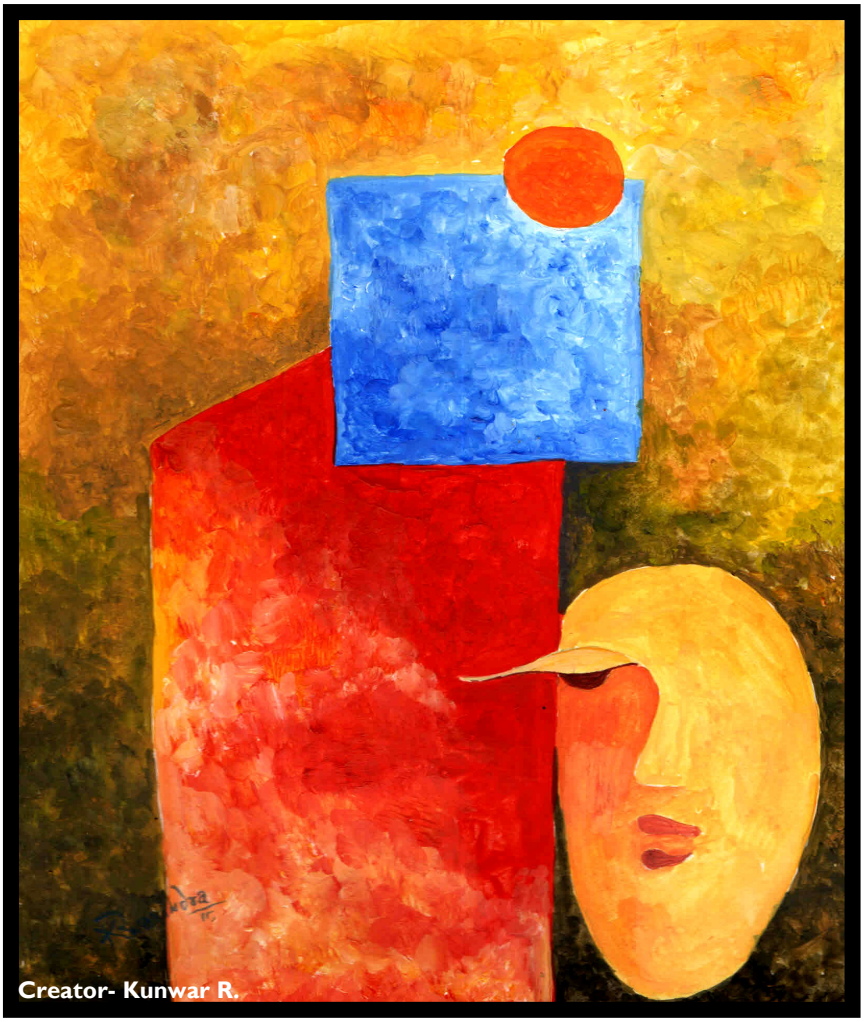

Creator- Kunwar R.

Japanese Language

Kanji, Hiragana and Katakana

भाषा

The Japanese language is so fascinating. The tonal qualities of the language is quite unique and the inherent politeness of the Japanese people is translated well into its language which is in turns elegant and stylish and drips with respect.

Japanese writing is also a very elegant script and it has evolved from its original Chinese script beginnings to become something that is intrinsically Japanese. There are actually different types or ways of writing Japanese characters and it has been a source of confusion for people who are not familiar with Japanese culture or for students of Japanese culture who have not yet fully researched the intricacies of the Japanese written language.

There are actually different types or ways of writing Japanese characters and it has been a source of confusion for people who are not familiar with Japanese culture

The three ways of writing Japanese characters are Kanji, Hiragana, and Katakana, with another version called Romaji being used for special purposed.

Kanji

The word kanji is a Japanese derivative of the Chinese word hanzi, which translates to Han characters. The word Han pertains to the Han Dynasty and is also the name that the Chinese use to refer to themselves.

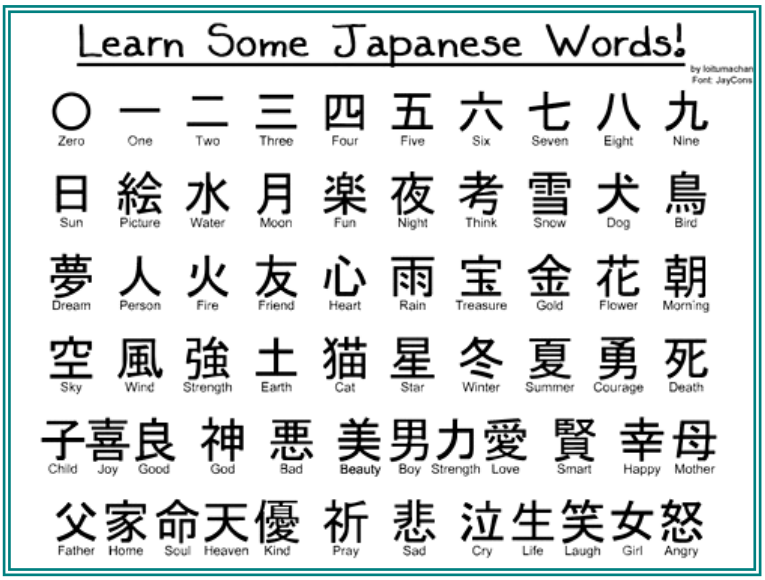

Using Kanji would mean employing between 5000 to 10000 Chinese characters. This meant that writing in this form was very difficult. In 1981, the Japanese government, as a measure to simplify how Japanese is written and read, intrduced the j?y? kanji hy? or List of Chinese Characters for General Use. The list includes 1945 regular characters and 166 special characters that has a use only for writing peoples names. All official documents, as well as newspapers, textbooks as well as other publications only use this form.

TRANSFRAME TEAM

Hiragana

Chinese characters are considered as the source for Hiragana syllables. Hiragana which means ordinary syllabic script — was referred to originally as onnade or womens hand because women used this form the most. Men are known to write in Kanji and Katakana. But usage of Hiragana evolved through the centuries, and by the 10th century, it was being used by both men and women.

The earliest versions of hiragana had diverse characters that represent the same syllable. The whole system was simplified however in order to make it easier to use by establishing a one to one correspondence between the written and spoken syllables.

HIRAGANA

あ a	い i	う u	え e	お o	——	——	——
か ka	き ki	く ku	け ke	こ ko	きゃ kya	きゅ kyu	きょ kyo
さ sa	し si	す su	せ se	そ so	しゃ sha	しゅ shu	しょ sho
た ta	ち ti	つ tu	て te	と to	ちゃ cha	ちゅ chu	ちょ cho
な na	に ni	ぬ nu	ね ne	の no	にゃ nya	にゅ nyu	にょ nyo
は ha	ひ hi	ふ hu	へ he	ほ ho	ひゃ hya	ひゅ hyu	ひょ hyo
ま ma	み mi	む mu	め me	も mo	みゃ mya	みゅ myu	みょ myo
や ya	——	ゆ yu	——	よ yo	——	——	——
ら ra	り ri	る ru	れ re	ろ ro	りゃ rya	りゅ ryu	りょ ryo
わ wa	——	——	——	を wo	——	——	——
ん n	——	——	——	——	——	——	——
が ga	ぎ gi	ぐ gu	げ ge	ご go	ぎゃ gya	ぎゅ gyu	ぎょ gyo
ざ za	じ zi	ず zu	ぜ ze	ぞ zo	じゃ ja	じゅ ju	じょ jo
だ da	ぢ di	づ du	で de	ど do	——	——	——
ば ba	び bi	ぶ bu	べ be	ぼ bo	びゃ bya	びゅ byu	びょ byo
ぱ pa	ぴ pi	ぷ pu	ぺ pe	ぽ po	ぴゃ pya	ぴゅ pyu	ぴょ pyo

www.alfabetos.net

Katakana

The Katakana alphabets have a very storied history. It was taken from abbreviated Chinese characters that were used by Buddhist monks. They used Katakana in order to illustrate the correct pronunciations of Chinese text back in the 9th century. Initially, there were so many different symbols used just to represent one syllable that it became quite confusing. But through time, it became more streamlined. Katakana was initially thought of as mens writing but over the centuries it has been used to write onomatopoeic words, foreign names, telegrams, and non-Chinese loan words. Katakana contains about 48 syllables.

イ レ ズ ミ **KATAKANA CHART** イ レ ズ ミ

ア イ ウ エ オ A I U E O	ラ リ ル レ ロ RA RI RU RE RO	キャ キュ キョ KYA KYU KYO	ギャ ギュ ギョ GYA GYU GYO
カ キ ク ケ コ KA KI KU KE KO	ワ ヲ ン WA WO(O) N	シャ シュ ショ SHA SHU SHO	ジャ ジュ ジョ JA JU JO
サ シ ス セ ソ SA SHI SU SE SO	ガ ギ グ ゲ ゴ GA GI GU GE GO	チャ チュ チョ CHA CHU CHO	ヂャ ヂュ ヂョ JA JU JO
タ チ ツ テ ト TA CHI TSU TE TO	ザ ジ ズ ゼ ゾ ZA JI ZU ZE ZO	ニャ ニュ ニョ NYA NYU NYO	ビャ ビュ ビョ BYA BYU BYO
ナ ニ ヌ ネ ノ NA NI NU NE NO	ダ ヂ ヅ デ ド DA JI ZU DE DO	ヒャ ヒュ ヒョ HYA HYU HYO	ピャ ピュ ピョ PYA PYU PYO
ハ ヒ フ ヘ ホ HA HI FU HE HO	バ ビ ブ ベ ボ BA BI BU BE BO	ミャ ミュ ミョ MYA MYU MYO	ー ッ Long Vowel / Double Consonant
マ ミ ム メ モ MA MI MU ME MO	パ ピ プ ペ ポ PA PI PU PE PO	リャ リュ リョ RYA RYU RYO	
ヤ ユ ヨ YA YU YO			

There is also another script used in the Japanese language called Romaji. It is basically used to write the Latin alphabet into Japanese characters, especially for English or Latin alphabet-spelled words that do not have a direct Japanese translation.

わ (wa)	ら (ra)	や (ya)	ま (ma)	は (ha)	な (na)	た (ta)	さ (sa)	か (ka)	あ (a)
	り (ri)		み (mi)	ひ (hi)	に (ni)	ち (ti)	し (si)	き (Ki)	い (i)
を (wo)	る (ru)	ゆ (yu)	む (mu)	ふ (hu)	ぬ (nu)	つ (tu)	す (su)	く (ku)	う (u)
	れ (re)		め (me)	へ (he)	ね (ne)	て (te)	せ (se)	け (ke)	え (e)
ん (n)	ろ (ro)	よ (yo)	も (mo)	ほ (ho)	の (no)	と (to)	そ (so)	こ (ko)	お (o)

हिंदी साहित्य में राधा का स्वरूप

भाषा

जाहिर है कि परंपरागत राधा जो मिथकीय पात्र के रूप में आने के बावजूद भी उसका कोई प्रवृत्तिगत चरित्र निश्चित नहीं हो पाया सिवाय श्रृंगार एवं भक्ति के हास, परिहास, संयोग एवं वियोग फिर भी समय परिवर्तन के साथ ही राधा के चरित्रगत मूल में नया मोड़ आता गया।

डॉ. चरण जीत सिंह सचदेव
एसोसिऐट प्रोफेसर
खालसा कॉलेज, हिंदी-विभाग
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
9811735605
Charanjeet.singh1234@yahoo.com

प्रत्येक समय में प्रेम की तरह-तरह की परिभाषाएँ होती रही है। इसके प्रतिमान टूटे बने फिर भी, यह भावना सर्वाधिक केंद्रीय महत्व रखती रही। इसके अंतर्गत श्रृंगार एवं विप्रलंभ दोनों को कवियों ने खूब दर्शाया। प्रेम की जो भी परंपरा रही हो उसमें सर्वाधिक मान्यता 'दांपत्य प्रेम' को ही मिला। प्रेम में अद्वैत का भाव होता है, समर्पण, कर्तव्यनिष्ठा, प्रतिबद्धता और चाहत आदि उसके सर्वोत्तम गुणों में से है। प्रेम को सबने अपने अनुसार महसूस किया। इसका संबंध काम, रति, सौंदर्य , भक्ति, श्रद्धा आदि भावों से जोड़ा गया। किसी के लिए प्रेम *'गूंगे केरि संरकरा, खाय मुसकाय'* है तो किसी के लिए *'प्रेम समुद्र जो अति अवगाहा। जहां न वार न पार न था हा।'* जायसी की इस पंक्ति में प्रेम भावना का दायरा अत्यंत विशाल है जिसकी थाह कोई नहीं पा सकता। जो लौकिक से होते हुए अलौकिक तक की यात्रा करता है। कृष्ण कथा में 'राधा' की विशेष भूमिका है। राधा कहीं विनोद, श्रृंगार व परम्परित रूपों में काव्य विषय का हिस्सा बनीं हैं तो कहीं अलौकिक ब्रह्म को प्राप्त करने के सहायक रूप में। कवियों ने इस मिथकीय पात्र को 'मर्दाना भाव' से अनेक संदर्भों में रचा और समय-समय पर राधा का नया काव्य-विधान ढूढ़ लिया। किंतु इतना तो स्पष्ट है कि राधा का प्रेम अनन्यता, एकनिष्ठता, भावा वेग, तन्मयता, समर्पण भाव को लिए हुए है।

कृष्ण का व्यक्तित्व ऐश्वर्यशाली होने की वजह से कवियों को प्रेरित कर रहा है और उनके साथ राधा का ज़िक्र होना स्वभाविक था। प्रत्येक युग के अनुरूप राधा के स्वरूप में परिवर्तन होता रहा है और इस स्वरूप परिवर्तन में किसी ने राधा में प्रेम ढूँढा तो किसी ने उसे असीम सौंदर्य की प्रतिमूर्ति कहा। किसी ने मांसल सौंदर्य का ज़िक्र किया तो किसी ने 'रतिक्रीडा' का माध्यम बना दिया। राधा व कृष्ण को आत्मा परमात्मा, भगवान-भक्त, नायक-नायिका आदि आवरणों में बांधने की कोशिश साहित्य में होती रही है। प्रत्येक समय की सामाजिक सरचनाएँ अपने अनुसार अपना मार्ग बनाती है उसी परिवर्तन के हिसाब से मिथकीय चरित्र भी बनते-बिगड़ते रहते हैं, लेकिन राधा का कोई भी निश्चित चरित्र कभी भी देने की कोशिश नहीं की गई, बल्कि इसे लोगों ने मनोरंजन का साधन माना। इसको जब लोगों ने जैसे चाहा उसी तरह से प्रस्तुत किया, किसी ने भक्ति के आवरण में ढका तो किसी ने वृक्षों एवं कुंजों में। क्या किसी और मिथकीय चरित्र की मानसिक निर्मिति इस तरह से हुई?

हिंदी में कृष्ण व राम प्रारंभ से ही पाठक के समक्ष विभिन्न स्वरूपों में उपस्थित होते रहे हैं और उनकी सहचरी के रूप में राधा और सीता भी अपनी जगह निश्चित करती चली आ रही हैं। राधा नारी चित्ति के गुप्त रहस्यों को उजागर करती है। सीता के मिथकीय एवं सामाजिक इतिहास में व्यापक चरित्रगत बदलाव नहीं दिखाई पड़ता, उनके यहाँ कामक्रीड़ा का महिमामंडन नहीं है, इसीलिए वे मर्यादित हैं, जबकि राधा का व्यक्तित्व वैविध्यमय है। हालांकि कृष्ण-कथा राजनीतिक व कूटनीतिक समझ को बढ़ाती है, क्योंकि समय की जटिलाओं को अपने साथ लेती चलती है। इसीलिए इसकी (कृष्ण कथा) चाल टेढ़ी है और निरंतर गतिशील है। इसी सबके कारण कृष्ण कथा का अपना एक गतिशास्त्र है। इसी कथा की कोख से राधा का आगमन होता है, जिसका कोई निश्चित स्वरूप नहीं तय किया गया, जैसे-जैसे सामाजिक परिवर्तन हुआ, उसी हिसाब से राधा के प्रति भी कवियों का दृष्टिकोण बनता बिगड़ता रहा। खासतौर से राधा के चित्रांकन में कवियों की अपनी दृष्टि और युगीन समस्याओं

का प्रभाव देखा जा सकता है। राधा नामक पात्र को रचते समय दो गुणों का समावेश प्रधानता के साथ किया गया, जिसमें पहला घोर श्रृंगारिक और दूसरा भक्ति का। इस तरह से एक परंपरा जयदेव के 'गीतगोविंद' से होते हुए विधापति की पदावली को पार करते हुए रीतिकाल में प्रवेश करती है। जबकि राधा को वर्णित करने की दूसरी परंपरा 'विष्णुस्वामी' से बल्लभाचार्य में और इनसे सूरदास तक पहुँचती है। इन्हीं दो गुणों से होते हुए 'राधा' की तस्वीर सामने आती है।

ऐसे में यह जानना जरूरी है कि राधा विभिन्न समयों में किस प्रकार की भूमिका में रही हैं। 'गीतगोविंद' में प्रेम रतिक्रीड़ा का वर्णन मात्रा बन कर रह गया है। जयदेव ने अधिकांश पदों में रतिक्रीड़ा को विभिन्न क्रिया रूपों में अभिव्यक्त किया है। हालांकि इसमें आवरण कृष्ण राधा के प्रेम का लिया गया है। जयदेव के यहाँ जो प्रेम है वह लज्जा पैदा करता है, वासनात्मक है, सेक्सी है। रतिक्रीड़ा को जयदेव 'सुरत संग्राम' कहते हैं, जिसमें कृष्ण व राधा एक दूसरे से जूझते हुए अलौकिक सुख प्राप्त कर रहे हैं-

"प्रत्यूहः पुलकाङकुरेण निविडाश्लेषे निमेषेण च
क्रीडाकूतविलोकितेऽधरसुधापाये कथाकेलिभिः।
आनंदाधिगमेन मन्मथकलायुद्धोऽपि यस्मिन्नभू
दुर्द्भूतः स तयोर्वभूव सुरतारंभ: प्रिय भावुकः।"1

जयदेव के यहाँ प्रेम शारीरिक सुख की चाहत में अधिक आया है। भगवान का नाम देकर जयदेव ने कृष्ण को राधा के उन्नत व सुंदर स्तनों को एक चाव से टकटकी लगाकर देखने के लिए छूट देते हैं, और उन्हें 'कामकलाप्रवीण' कहते हैं-

'राधायाः स्तनकोरकोपरिचलन्नेत्रो हरिः पातु वः।'

यही नहीं राधा के एक-एक अंग को कृष्ण ने काट डाला है। राधा के एक-एक अंगों का मर्दन इस पद में देखा जा सकता है-

"दोभ्र्यां संयमितः पयोधर भरेणापीड़ितः पाणिजै।
राविद्धो दशनैः क्षताधरपुटः श्रोणीतटेनाहतः।।
हस्तेनानमितः कचेऽधरमधुस्यन्देन सम्मोहितः
कान्त कामापि तृप्तिमाप तदहो कामस्य वामा गतिः।2

इस तरह की कष्ट देने वाली क्रियाओं का वर्णन 'कामशास्त्र' में मिलता है। राधा व कृष्ण के बीच जो केलिक्रीड़ा संपन्न हो रही है वह युगीन समय की पूर्ति के अनुरूप है। लेकिन प्रेम की अंतिम परिणति भौतिक दुनिया में सहवास ही है और प्रेम का शारीरिक सुख भी यही है।

कुल मिलाकर 'गीतगोविंद' राधा-कृष्ण के बहाने एक साहित्यिक पहल है जो सिर्फ पढ़ा जा सकता है, देखा नहीं जा सकता। यह प्रेम के अंतिम परिणति के देह सुख की चरणबद्ध प्रक्रियाओं को उद्घाटित करता है। जयदेव ने कृष्ण व राधा के स्वस्थ प्रेम को विश्लेषित करने की चाहत में नंगा अधिक कर दिया। यह सामाजिक स्वीकृति आज की नहीं हो सकती, तब की हो सकती है जब मंदिरों में कामशास्त्र को वर्णित किया जाता था, यह वही समय है जब 'एजेंटा एवं एलोरा' की गुफाएँ और खजूराहों जैसी कलाएँ सामने आती हैं। किंतु आज का पाठक 'गीतगोविंद' में आए हुए तमाम चेष्टाएँ, मुद्राएँ को देखकर विचलित हो सकता है और उसे सस्ता किस्म का साहित्य घोषित कर सकता है। एकांत के क्षण को जयदेव ने सार्वजनिक कर दिया है। यहाँ पर प्रेम और रसिकता घोर अश्लील हो गई है जो एकदम उघड़ कर सामने आ गई है। इसे मधुरा भक्ति कहकर मानक पाठकों का मनोरंजन किया गया और कुछ नहीं। यहाँ श्रीकृष्ण व राधा नायक-नायिका की भाँति ही आते हैं जो उस समय की राजा की विलासिता पूर्ण जीवन को दर्शाती हुई आई है। यहाँ राधा श्रृंगार की साक्षात मूर्ति है जो उत्प्रेरक का काम करती है। अतः जयदेव की राधा विलासिता में सहयोगी की भूमिका में नज़र आती है।

इसी परंपरा को आगे बढ़ाते हुए विद्यापति ने राधा-कृष्ण को आधार बनाकर श्रृंगार के बड़े मनमोहक एवं सुंदर चित्र 'पदावली' में खींचने का प्रयास किया है। इसीलिए विद्यापति को 'अभिनव जयदेव' भी कहा गया। राधा-कृष्ण के प्रेम में जो माधुर्य है वह 'पदावली' में दिखाई पड़ता है। श्रृंगार के दोनों पक्षों का चित्रण इनके प्रेम में है, जिसका निरूपण विद्यापति अपने पदों में करते हैं।

इनके पदों में आए प्रेम के बारे में आचार्य शुक्ल कहते हैं कि "विद्यापति के पद अधिकतर श्रृंगार के ही है। जिनमें नायिका और नायक राधा-कृष्ण है।"3 राधा के प्रेम की अद्भुत प्रगाढ़ता इस पद में उभरकर सामने आ जाती है, जिसमें वह प्रेमी कृष्ण के बारे में इतना चिंतन करती है कि वह स्वयं कृष्णमय हो जाती है। *"अनुखन माधब माधब सुमरइते, सुंदरि भेलि मधाई। ओ निज भाव सुभावहि बिसरल, अपनेहि गुन लुबुध"*4 इस पंक्ति में प्रेम अपने शरीर एवं गुणों पर मुग्ध होने के संदर्भ में दर्शाया गया है। अर्थात राधा अपने ही गुणों पर एवं शरीर पर मुग्ध होने लगती है।

यही नहीं राधा का प्रेम 'क्रीड़ा और कौतुक' की अभिव्यक्ति के रूप में भी देखा जा सकता है, जहाँ प्रेम में रहस्यों को जानने की उत्सुकता निरंतर बनी रहती है। उसी का आत्मगत वर्णन इस पद में देखा जा सकता है-

"ए सखि पेखलि एक अपरूप। सुनइत मानब सपन-सरूप।।

कमल-जुगल पर चाँदक माला। तापर उपजल तरून तमाला।।

तापर बेढ़लि बीजुरि-लता। कालिंदी तट धिरें-धिरें जाता।।

साखा-सिखर सुधाकर पाँति। ताहि नब पल्लब अरूनिम काँति।।

*बिमल बिम्बफल जुगल विकास। तापर कीर थीर करु बास।"*5

प्रेम-प्रसंग में आकर्षण की भूमिका महत्वपूर्ण होती है, जिसकी अद्भुत झांकी इस पद में देखी जा सकती है, जहाँ राधा-कृष्ण एक दूसरे को देखते हैं और उसी समय आँखे चार हो जाती हैं और एकाएक दोनों के हृदय में काम का संचार होता है-

"पथ-गति नयन मिलल राधा कान। दुहुमन

मनसिज पुरल संधान। दुहु मुख हेरइत दुहु भेल भोर

समय न बूझए अचतुर चोर।'....कुटिल नयान

कएल समधान। चलल राज पथ दुहु उरझाई।"6

विरह भी प्रेम को मजबूती प्रदान करता है। राधा विरह में इतनी तल्लीन हो जाती है कि अपने को ही कृष्ण समझने लगती है और राधा-राधा रटने लगती है। पुनः जब होश में आती है तो कृष्ण के लिए बैचेन हो जाती है। दोनों अवस्थाओं में मर्म व्यथा का गहराई से अंकन देखने को मिलता है- "अनुखन राधा-राधा रटइत, आधा-आधा बानि।"7

राधा का कृष्ण के प्रति जो चाहना है वह बहुत कुछ पा लेने की चाह में है इसी को न पाने के कारण वह वियोग का अनुभव करती है। राधा कृष्ण के पाने के प्रयास में उसे खो अधिक देती है। राधा का स्वभाव कृष्ण हैं, जिसे पाने की व्याकुलता है। दुख हमारे स्वभाव का अनिवार्य हिस्सा है इसको जिसने साध लिया वह स्वयं पर केंद्रित हो जाएगा, दूसरे पर आत्मनिर्भर नहीं रहेगा, लेकिन यह भौतिक संसार में संभव नहीं। इसीलिए विद्यापति की राधा का पूरा टिकाव, निर्भरता, आसक्ति कृष्ण के प्रति है। यह समय पितृसत्तात्मक है और समाज में नारी की स्थिति को बयां करता है। विद्यापति की राधा कामुक एवं काम भावना से ग्रस्त है। प्रेम यहाँ पर मांसल सौंदर्य की अभिव्यक्ति के रूप में सामने आता है। अब तक हुए राधा के वर्णन से स्पष्टतया कहा जा सकता है कि आनंद प्राप्ति की मांग कवियों को राधा से अधिक रही, अस्मिता देने की बात पर उनकी कलम रुक-सी गई।

सर्वप्रथम राधा को किसी ने सम्मानित व भक्ति भावना से देखने की कोशिश की तो वह 'सूरसागर' के सूरदास हैं। कई जगहों पर कृष्ण की उपासना के साथ राधा की भी उपासना देखने को मिलती है। यहाँ पर शारीरिक चित्रण व श्रृंगारिक पक्ष गौण होकर प्रेम में भक्ति प्रधान हो गई। भक्तिकाल की राधा जीवन के प्रति प्रेम जागृत करती है।' जो भगवान श्रीकृष्ण को प्राप्त करने के लिए 'प्रेम' को चुनती हैं जिसमें सात्विकता तो थी ही, वहीं उसके पीछे सामाजिक समस्याओं व लोगों में एक दूसरे के प्रति विश्वास को बहाल करने की भरपूर कोशिश भी कर रही थी। एक तरह से जो नैराश्य था उसको खत्म करने का एकमात्र प्रेम ही उपाय था। यहाँ विद्यापति की घोर श्रृंगारिक राधा से सूर की राधा में जो उदात्तता देखने को मिलती है वह विचार संक्रमण की स्थिति जरूर है, किंतु दोनों अपने युगों से उपजे संदर्भों व समस्याओं को लेकर चित्तित हैं। एक के लिए श्रृंगार एवं विलासिता पूर्ण वातावरण में सृजन

करना है तो दूसरे के लिए पूर्ववर्ती वातावरण में मुक्त होकर लोकजागरण के रूप में सूर ने राधा के जिस मार्धुय भाव की व्यंजना की है वह कृष्ण व गोपियों के प्रेम के बहाने भक्ति भावना की पराकाष्ठा पर पहुँच गया है। इस पद में राधा की प्रेम के मधुर चित्रों को सूर ने बड़ी ही तन्मयता के साथ व्यंजित किया है जो काफी आकर्षक बन पड़ा है। राधा माधव बन गई और माधव राधा। माधव राधा के रंग में रंग गए, राधा माधव से और माधव राधा में हंसकर बोले हममें तुममें अंतर क्या हैं?

"माधव राधा के रंग रचे राधा माधव रंग गई

माधव राधा प्रीति निरंतर, रसना करि सो कहि न गई

बिहँसि कही हम तुम नहीं अंतर, यह कहि कैं उन ब्रज पठई

सूरदास प्रभु राधा माधव, ब्रज बिहार नित नई नई।8

यह है सूरदास की राधा शायद ही किसी कवि ने राधा का वर्णन इस ढंग से किया है। प्रेम की स्वस्थ विशेषताओं की जितनी चर्चा पंडितों के द्वारा की जाती है उसकी पूरी गुंजाइश सूर के पदों में देखा जा सकता है। अपने प्रभु के प्रति 'अनन्यता' का भाव व्यक्त करती हुई गोपियां उन्हें 'हरि हारिल की लकरी' तक कहती हैं और प्रेमतत्व के सर्वोत्कृष्ट गुणों में से 'समर्पण' को धारण करती है। सूरदास की राधा सिर्फ प्रेयसी नहीं है वरन वह साधन है उस साध्य को पाने की, एकनिष्ठ होने की तभी वह स्वाभिमानी है। इनकी राधा का स्वरूप सात्विक व उदात्त अधिक है। सूर की राधा को वियोग के क्षणों में न तो हरियाली ठीक लगती है और न ही कृष्ण के साथ बिताए हुए महत्वपूर्ण पल। कोई भी उनके दुखों को कम नहीं कर पाता स्वार्थ रहित आकांक्षा, उछलकूद से परे से सुशोभित राधा का स्वरूप बनता है। तन्मयता, समर्पण व एकनिष्ठता उनके स्वाभिमान को और अधिक मजबूती प्रदान करता है। आचार्य शुक्ल राधा कृष्ण के प्रेम को लेकर कहते हैं "राधा कृष्ण के प्रेम को लेकर कृष्ण भक्ति की जो काव्य परंपरा चली उसमें लीला पक्ष अर्थात बाह्यार्थ विधान की प्रधनता रही है। उसमें केलि, विलास, रास, छेडछाड, मिलन की युक्तियों आदि बाहरी बातों का ही विशेष वर्णन है। प्रेमलीन हृदय की नाना अनुभूतियों की व्यंजना कम है।"9 अतः सूर की राधा आध्यात्मिक गुणों को मजबूत करती है। कृष्ण महामानव या ईश्वर के रूप में परिकल्पित हैं जिसे पाने की चाहत में वह प्रेम के उपर्युक्त गुणों का सहारा लेती हैं। विद्यापति ने राधा के प्रेम के बहाने यौनाकर्षण का अंकन प्रस्तुत किया है। इसमें शारीरिक कामकेलि को खूब दिखाया गया है जबकि भक्तिकाल की राधा ऐहिक नहीं है वह ईश्वर केंद्रित है। इसीलिए लीलाभाव में सह की भूमिका में है। सूर की राधा वर्णाश्रम के घेरे से छूटकर गृहस्थ को ढ़ीला करती हुई प्रेम करती है, स्वच्छंदता और मुक्ति का वरण करते हुए सुथरापन, समर्पण, दिव्यता और उच्चता का धारण करती है। जबकि रीतिकाल में संक्रमण की स्थिति है, जो द्वंद के कारण है, क्योंकि रीतिकाल के कवियों ने ईश्वर और मनुष्य में से मनुष्य का ही चुनाव किया। भिखारीदास कहते हैं कि- 'आगे के सुकवि रीझि हैं तो कविताई न तौ/राधिका-कन्हाई सुमिरन को बहानो है।' भिखारीदास के लिए रचना प्रमुख है, यदि कविता न बने तो उसी बहाने राधा-कृष्ण का स्मरण हो जाए। रीतिकाल की राधा सामाजिक महत्ता एवं समन्वित गौरवमयी मूर्ति से काफी दूर है। इस काल में राधा-कृष्ण रचना लेखन में माध्यम के रूप में आते हैं उन्हें उनके भक्ति प्रेम के कारण नहीं वरन साधन होने की वजह से अधिक याद किया जाता है। जबकि सूर के लिए ईश्वर भक्ति प्रधान है और उसी बहाने राधा के प्रेम का बखान भी हो जाए। यह प्रभु उद्देश्य है न कि कविता बन जाए। बिहारी ने भी लिखा है-

"मेरी भव बाधा हरौ राधा नागरि सोय

जा तन की झांई परै स्यामु हरित दुति होय।"10

यहाँ पर राधा की वंदना उतना प्रमुख नहीं है जितना कि काव्य में चमत्कार लाना। कवि कर्म में चमत्कार उत्पन्न करना ही इनका ध्येय है। रीतिकाल में प्रेम सिर्फ बहाना मात्र हो गया असल चित्रण शारीरिक व स्थूल का अधिक किया गया, जो घोर श्रृंगारिक की कोटि तक जा पहुँचा है। भक्ति काल के उत्तरार्ध में रहीम, सेनापति, केशव आदि कवियों ने श्रृंगार और विलासिता से युक्त मनोभावों की अभिव्यक्ति में राधा-कृष्ण का नामोल्लेख किया। "राधा की युगल लीला के प्रति कहीं-कहीं मतिराम की बहुत सुंदर उक्तियाँ हैं। वे श्रृंगार रस के आश्रय आलंब रहे हैं, भक्ति के नहीं।"11 भारतेंदु कालीन साहित्य में प्राचीन और वर्तमान की युग संधि को देखा जा सकता है। ठाकुर जगन्मोहन सिंह ने अपने 'प्रेम सम्पत्तिलता' नामक ग्रंथ में राधा-कृष्ण के निस्वार्थ प्रेम का सुंदर चित्र अंकित किया है- 'अब यों उर आवत है सजनी, मिलि जाउं गरे लगि छतिया/मन की करि भांति अनेकन और मिलि कीजिए री

रस की बतियां/हम हारि अरी करि कोटि उपाय, लिखि बहु नेह भरी पतिया/जगमोहन मोहनी भूरति के बिन कैसे कटें दुख की रतियां। द्विजदेव ने दोहा छंद का भी प्रयोग किया है- 'श्री राधा की कबहुं हरि जावैं बन मैं बाट/लखि राधै हार संभ्रमै बर-अंगन को ठाट।'

इसमें निश्छल भावों की अभिव्यक्ति के लिए दोहा छंद का प्रयोग किया गया है। रीतिकाल के तमाम पदों को देखने से यह पता चलता है कि राधा कृष्ण इनके लिए मात्र उपकरण हैं। अगर कहीं पर इन्होंने उन्हें भक्ति के आवरण में ढकने की कोशिश भी की है तो वहाँ चमत्कार ही अधिक पैदा हुआ।

भक्तिकाल और रीतिकाल की अगली कड़ी भारतेंदु में दिखाई पड़ती है जहाँ नवीन चेतना और संस्कार विकसित हो रहा था, देशभक्ति, समाजसुधार और नारी जागरण की शुरूआत हो रही थी जो इस काल की प्रमुख देन थी। इसके बावजूद पारम्परिक श्रृंगार एवं नवीन चेतना के संन्धि स्थल में भारतेंदु युगीन कविता का प्रारंभ होता है। भारतेंदु के पदों में राधा-कृष्ण से संबंधित भक्ति के पदों को देखा जा सकता है- 'श्री राधा माधव युगल चरण रस का अपने को मस बना/पी प्याला भर-भर कर कुछ इस मै का भी देख मजा।

यही नहीं भारतेंदु की एक कविता है- 'सखा प्यारे कृष्ण के/गुलाम राधा रानी के।' पदों के जरिए ही यह कहा गया कि जो कृष्ण पहले 'राधानाथ' थे अब 'भारतनाथ' की भूमिका में आ गए। रीतिकाल की राधा श्रृंगारिकता से ग्रस्त है उसका चित्रण लौकिक अधिक है। इसी चित्रण में सामान्य प्रेमी-प्रेमिका एक दूसरे से घुले नज़र आते हैं। इसीलिए पाठक को राधा-कृष्ण के प्रेम का आस्वाद अश्लील की तरह दिखाई देता है। जबकि रीतिकालीन श्रृंगार का चित्रण भारतेंदु के यहाँ भी है किंतु उसमें चेतना का प्रादुर्भाव हो रहा है। इस युग में राधा-कृष्ण की प्रेम लीला का चित्रण सामान्य नायक-नायिका की चेष्टाओं के रूप में अधिक वर्णित किया गया है। परम्परित राधा का श्रृंगारिक वर्णन इनके यहाँ है।

इसी क्रम में 'प्रियप्रवास' की राधा है जो प्रेम की कष्टमय स्थिति विरह में व्याकुल नहीं होती हैं वरन लोककल्याण एवं सामाजिक दायित्वों के प्रति अपना कर्तव्य समझती है। खैर, यह तमाम तरह की नारी जागरूकताओं व आंदोलनों का दौर है, नहीं तो 'प्रियप्रवास की राधा भी 'तड़प' व 'रतिविलास' के लिए व्याकुल रहती। हरिऔध ने कृष्ण कथा को एक नवीन आयाम दिया, जो परंपरा से चली आ रही कृष्ण विरह में पड़ी राधा को समाज सेविका बना दिया। यह दरअसल द्विवेदी युग का स्वर है, जिसमें नैतिक व युगीन आशा महत्वपूर्ण थी। राधा मानवजाति के कल्यार्थ के रूप में सामने आयीं। उन्हें पहली बार रीतिकालीन राधा के कामकीड़ा, वियोग, वात्सल्य के पुरुषवादी नजरिए से निकाला गया और पहली बार नारी के प्रेम का सामाजिक मनोदशाओं के अनुकूल चित्रित किया गया। इसे नारी के लिए सम्मान का युग भी कह सकते हैं क्योंकि सामाजिक, आर्थिक व सांस्कृतिक रूप से नारी स्वतंत्र हो रही थी। इसीलिए वह पुरुषों पर आसक्त न होकर स्वयं पर निर्भर होने लगी थी। इसी तरह नारी अपने प्रेमी से आस न होकर उससे विलग होकर भी रहने लगी और तड़प, हाय तौबा से छूटकर भी वह अपने प्रियतम के प्रति आन्तरिक व बाह्यधरातलों पर अपनी ज़िम्मेदारी महसूस करने लगी। 'प्रियप्रवास' में राधा के व्यक्तिगत प्रेम को कवि युगीन समस्याओं पर केंद्रित कर देता है। जिसमें राधा का कार्य लोक सेवा है-

'मेरे जी में हृदय विजयी विश्व का प्रेम जागा/मैंने देखा परम प्रभु को स्वीय प्राणेश ही में।'12

'प्रियप्रवास' की राधा का मुख्य उद्देश्य प्रत्येक प्राणी के दुखों को दूर करना ही उसका एक मात्र कर्तव्य है। वह पवन को अपना दूत बनाकर विरह का संदेश जरुर भेजती है, किंतु समाज का कष्ट उसे अधिक महत्वपूर्ण लगता है- "जाते-जाते अगर पथ में/ कलान्त कोई दिखावे/ तो जाके सन्निकट उसकी क्लान्तियों को मिटाना/धीरे-धीरे परस करके गात उत्ताप खोना/सद्गंधों से श्रमित जन को हर्षितों सा बनाना।'13 मैथिलीशरण गुप्त 'द्वापर' खंड काव्य में एक ऐसी राधा को रचते हैं जो प्रगतिशील सोच की अधिक है, उसे अपनी भूमिका इस राष्ट्र के विकास में नज़र आती है, वह एक तरफ अगर प्रेम को रखती है तो दूसरी तरफ अपनी सामाजिक भूमिकाओं का निर्धारण करती हैं। इस समय की नारी राष्ट्रीय आन्दोलन के विकास में सहायक होती है जिसका प्रतीकात्मक रूप हमारे साहित्य में देखने को मिलता है। गुप्त की राधा के पास भारतीय संस्कृति का आग्रह है, समर्पण व कर्म के प्रति निष्ठा है। सामाजिकता से जुड़ी मानवीय चेतना है। इसीलिए गुप्त की राधा का प्रेम सहजनारी का प्रेम है। प्रलाप, उन्माद के लिए कोई जगह नहीं है और न ही देह-विमर्श की गुंजाइश। इनका प्रेम लज्जा पैदा नहीं करता है और नही 'कामसूत्र' के एक-एक चरणों को विश्लेषित ही करता है बल्कि, एक शांत, स्थिर और संयत प्रेम का पक्षधर है। अब वह किसी तरह की जकड़बन्दी में कैद नहीं होना

चाहती, बल्कि वह तमाम चेष्टाओं का वरण करना चाहती है चाहे वह कृष्ण के मुरली की धुन हो, या सभी धर्म के द्वारा जो पाबन्दियाँ लगाई गई हैं उसे तोड़ने के पक्ष में दिखाई अधिक पड़ती है। यथा-'शरण एक तेरे में आई/धरे रहें सब धर्म हरे/बजा तनिक तू अपनी मुरली,/ नाचें मेरे मर्म हरे/नहीं चाहती मैं विनिमय में/ उन वचनों का वर्म हरे/तुझको एक तुझी को अर्पित/ राधा के सब कर्म हरे।'

इन सबके बावजूद प्रेम की एकनिष्ठता व समर्पण जैसे तत्वों को लाने के पीछे गुप्त की मंशा स्पष्ट है, जो राधा के माध्यम से नारी चेतना की अभिव्यक्ति है। गुप्त का प्रेम आदर्श नारी की अधिक है जिसका स्वरूप 'दाम्पत्य प्रेम' तक पहुँचा है।

धर्मवीर भारती के यहाँ पर राधा-कृष्ण के परंपरागत प्रेम का आधुनिकीकरण हो गया है। 'कनुप्रिया' मूलतः प्रेम काव्य है जिसमें प्रेमी व प्रेमिका के रूप में राधा और कृष्ण हैं। इसमें संयोग श्रृंगार की चमक अधिक है तो वही वियोग श्रृंगार का स्वर मद्धिम। प्रेम और सौंदर्य का अदभुत सम्मिलन इस काव्य में देखने को मिलता है। राधा के श्रृंगार परंपरा को सुरक्षित जरूर रखा गया है किंतु सामाजिक विकास के साथ नवीन व्याख्याएँ भी प्रस्तुत की गई हैं। इसकी पूरी विवेचना आत्मकथात्मक है। कृष्ण के युद्ध क्षेत्र जाने पर वह चिंतित फिर है, किंतु अपनी चेतना के प्रति सजग भी। यहीं भारती की राधा अपने युगीन अस्तित्व के प्रति सचेत नज़र आती है। इनकी राधा में उस समय के तमाम नारी सुलभ गुणों को देखा जा सकता है चाहे वह ममता, प्रेम, दया, स्नेह, सौंदर्य हो या अपने कृष्ण की शक्ति सहचरी और लीला साध्य के रूप में। दोनों रूपों का सुंदर प्रयोग भारती ने किया है। इसमें वह अपने अधिकारों के प्रति सचेत है इसीलिए वे प्रश्न एवं चुनौती पेश करती है।

भारती की राधा के लिए प्रेम ही जीवन की कसौटी है। धर्मवीर का इतिहास बोध विराट के चित्रण में नहीं, बल्कि जीवन के सामान्य क्षणों को व्यक्त करने में अधिक लगा है। जीवन के यही जो सामान्य क्षण है वही राधा के लिए प्रेम का क्षण है, जिसको पूरी तन्मयता से राधा जी लेना चाहती है।

राधा-कृष्ण के प्रेम का यह भावपूर्ण चित्र देखते बनता है। उसे (राधा) यमुना में स्नान करते समय ऐसा प्रतीत होता है कि यमुना के जल को कृष्ण के श्यामल शरीर जैसा समझ बैठती है। यह पूरी तरह कृष्णमय होने की स्थिति है, जहाँ प्रेम में किसी दूसरे की गुंजाइश नहीं है। यह स्थिति एकमेक होने की, अद्वैत होने की और प्रेम बंधन की अद्भुत प्रगाढ़ता की मिसाल प्रस्तुत करती है- "मानो यह यमुना की साँवली गहराई नहीं है/यह तुम हो जो सारे आवरण दूर कर/मुझे चारों ओर से कण-कण रोम-रोम/अपने श्यामल प्रगाढ़ अथाह आलिंगन में पोर-पारे कसे हुए हो।"14 इस पंक्ति से यह प्रतीत होता है कि राधा कृष्ण से प्रेम में गहरे उतरी हुई है। भारती की राधा में ढिठाई है। वाचाल तो है ही, जिद्दी भी है। वह महामानव की अपेक्षा एक साधारण प्रेमी को महत्व देती है न कि उपदेशक व डाकू कृष्ण को। 'कनुप्रिया' की नायिका में प्रेम की रागात्मकता व सहजता दिखाई पड़ती है। 'तुम मेरे सचमुच कौन हो कनु' राधा की तरफ से पूछा गया प्रश्न मानसिक उत्तर की प्रतीक्षा किए बिना ही आकर उत्तर देती हुई राधा एक प्रेमिका की भाँति अपने मन की बात कह देती है- 'कनु मेरा लक्ष्य है, मेरा आराध्य, मेरा गंतव्य।' यही नहीं यहाँ पर राधा प्रश्न करती नज़र आती है। और कई जगहो पर रोमानियत को आत्मसात किए हुए है। जब वह कहती है कि मैं केवल मैं।' यानि तुम सभी दायित्वों, निर्णयो, कर्म, स्वधर्म, तर्क-वितर्क के बीच सिर्फ मेरी पीड़ा को पहचानो। बाकी दन-दुनिया से कोई मतलब नहीं, गौर करने की बात है। 'कनुप्रिया' की राधा आधुनिक नारी की भाँति अपने प्रेमी को हर मोड़ पर साथ रहने की आश्वासन देती है। "राधा संग सब पुन तहि माधव, माधव सँग जब राधा/कृष्ण के साथ रास लीला का चित्रण इस पद में देखा जा सकता है-

'मैं उस दिन लौटी क्यों/कण-कण अपने को तुम्हें देकर रीत क्यों नहीं गई?/तुमने तो उस रास की रात। जिसे अंशतः भी आत्मासात किया/ उसे संपूर्ण बनाकर वापस अपने-अपने घर भेज दिया।"15 यही नहीं राधा अपने संपूर्ण मन से कृष्ण के प्रति समर्पित है।

तुम्हारी संपूर्ण इच्छा का अर्थ हूँ। केवल मैं। केवल मैं!! केवल मैं!!!16 भारती की राधा के यहाँ पर वासना एवं मांसलता का चित्रण देखा जा सकता है जिसे प्रेम का संयोग पक्ष कहा जा सकता है। उदाहरण के लिए में देखी जा सकती है। 'मैंने कस कर तुम्हें जकड़ लिया है।' वियोग की स्थिति को भी देखा जा सकता है कि वह बाजारों में दही ले लो की जगह 'श्याम ले लो! श्याम ले लो! कहकर अपना उपहास उड़वाती है। कुल मिलाकर भारती की राधा के प्रेम में शारीरिक आकर्षण व युगीन बौद्धिकता की मानसिक निर्मिति अधिक है।

इसी क्रम में रमाकांत रथ ओड़िया के प्रसिद्ध कवि हैं जिन्होंने एक ऐसी राधा की कल्पना की जो चिड़चिड़ी नहीं हैं कृष्ण के वृंदावन छोड़ने के समय भी वह उदासीन नहीं है और न ही उसे प्राप्त करने के लिए किसी तरह की उपाय भी करती है। प्रेमी छोड़ कर जा रहा है तौ जाए। वह निराश व कुंठित नहीं होती वरन अपनी भूमिका को लेकर चिंतित अधिक है। 'वह निराश हो सकती है तो केवल इसलिए कि कृष्ण को जिस सहानुभूति तथा संवेदना की आवश्यकता थी, वह उसे न दे सकी, न दे पाने की पीड़ा कुछ लोगों के लिए न ले पाने की पीड़ा बड़ी होती है।' इसीलिए उन्होंने (रमाकांत रथ) अपने प्रसिद्ध महाकाव्य 'श्री राधा' में राधा की भाव प्रवणता व अत्यंत गांभीय के साथ वैचारिक राधा को प्रस्तुत किया है- 'आज की तरह धकधक नहीं करती थी, भला, मैं क्या जानूं, मेरे जीवनकाल अथवा यमुना जाने की राह की मोड़ पर होगा/ कैसा अपदस्थ होने का योग अथवा अन्य सभी संबंधों को उजाड़ डालने वाले संबंध/मेरी जरा, मृत्यु, व्याधि आदि की राह हँसते हुए रोक लेंगे।"

राधा-कृष्ण की अनन्यता, आत्मा और परमात्मा की ही एकता है। अहंकार से मुक्ति ही भक्ति है जिसका आधार राधा है। जानकीवल्लभ शास्त्री ने राधा-कृष्ण के प्रेम को आध्यात्मिक धरातल पर संदर्भित किया है। यहाँ पर प्रणय की ढ़ेरों गुजाइश नहीं है वरन इसकी चेष्टा लौकिक जगत में ही संभव है। इन्होंने 'राधा' को पुरुषार्थ, प्रणय व दार्शनिक कोटियों में रखने की कोशिश की है- 'कौन सी प्रतिपति, करती व्यर्थ शब्द-प्रयोग। राधिका आराधिका थी, मौन मन का योग।'17

किंतु आज 'राधा' को प्रेम के प्रतीक रूप में याद करने की परंपरा का निर्वहन नहीं हो पा रहा है, क्योंकि बड़ी पड़ताल के बाद विष्णु खरे के यहाँ पर 'राधा' नाम का ज़िक्र आता है किसी संदर्भ को मजबूत करने के लिए अधिक है न कि स्मृतियों में जाकर उस प्रसंग को रेखांकित करने के लिए। उनकी 'वृंदावन की विधवा' कविता में 'राधा' को अपने समय की विधवा स्त्री के रुपक में दिखाया है। 'खोजती हुई वे पहुँची होंगी वृन्दावन/जहाँ वृद्धा राधा ने/ उनसे कहा होगा/मरण छू नहीं सकता उसे/यहीं कहीं है वह गो वल्लभ।'18

कुल मिलाकर अभी भी राधा पर काम करने की भरपूर गुंजाइश है। जाहिर है कि परंपरागत राधा जो मिथकीय पात्र के रूप में आने के बावजूद भी उसका कोई प्रवृत्तिगत चरित्र निश्चित नहीं हो पाया सिवाय श्रृंगार एवं भक्ति के हास, परिहास, संयोग एवं वियोग फिर भी समय परिवर्तन के साथ ही राधा के चरित्रगत मूल में नया मोड़ आता गया। इतिहास उसके क्रमबद्ध चरित्र विकास के विषय में पूर्णतः गतिशील है। इसीलिए राधा का विकास समान सापेक्ष है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. गीत गोविन्द-महाकवि जयदेव, राजकुमार एण्ड सन्स संस्करण 2010, पृ. 195
2. वही, पृ. 195
3. हिंदी साहित्य का इतिहास, आचार्य रामचंद्र शुक्ल, पृ. 32
4. विद्यापति की पदावली, संपादक रामवृक्ष बेनीपुरी, लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद, संस्करण 2005, पृ 144
5. वही, पृ. 54
6. वही, पृ. 48
7. वही, पृ. 144
8. सूरदास, संपादक हरबंस लाल शर्मा, राधाकृष्ण प्रकाशन, दसवीं आवृत्ति, 2005, पृ. 202
9. हिंदी साहित्य का इतिहास, आचार्य रामचंद्र शुक्ल, पृ. 94
10. बिहारी सार्धशती, डॉ. ओमप्रकाश, राजपाल एण्ड सन्ज, संस्करण 1998 पृ. 11
11. मिथक उद्भव और विकास तथा हिंदी साहित्य, डॉ. उषापुरी विद्यावास्पति, पृ 7

12. प्रियप्रवास, हरिऔध, षष्टसर्ग, हिंदी साहित्य कुटीर, संस्करण 2013 पृ. 254
13. वही, 65
14. कनुप्रिया, धर्मवीर भारती, संस्करण 1968, पृ. 17
15. वही, पृ. 18
16. वही पृ. 46
17. जानकीवल्लभ शास्त्री-राधा, पृ. 9
18. लालटेन जलाना विष्णुखरे, पृ. 53

परिचय

डॉ. चरण जीत सिंह सचदेव खालसा कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय में वरिष्ठ प्राध्यापक हैं और विभिन्न साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओं में लिखते रहे हैं। इसके अतिरिक्त उन्होंने क्रिकेट जैसे खेल पर भी लेखन कार्य किया है। 'सत संदेश' नामक पत्रिका के संपादक हैं, वहीं 'निराला के तुलसीदास' नामक किताब उनकी चर्चित कृति है। 'कुछ कवियों के बहाने' उनकी संपादित किताब है, जो आधुनिक कवियों को नई दृष्टि में विश्लेषित करती

अनुवादाभास की संकल्पना और संकेतवैज्ञानिक संदृष्टि

शोध

अनुवादक यदि अनुवाद की भाषावैज्ञानिक आधारित प्रक्रिया के प्रभाव से स्वयं के मस्तिष्क को मुक्त कर के संकेतवैज्ञानिक दृष्टि से मूल और लक्ष्य पाठ को देखें, तो निश्चित ही अनुवाद में आने वाली यह असहजता, अनुवादभास की संभावना को कम किया जा सकता है। अनुवाद में संकेतवैज्ञानिक संदृष्टि 'अनुवदाभास एक वास्तविकता है' इस तथ्य को खारिज करने की क्षमता रखती है।

मेघा आचार्य
पीएचडी हिंदी
(अनुवाद प्रौद्योगिकी)
acharyamegha20@gmail.com

सारांश

अनुवाद की प्रक्रिया पर विद्वानों द्वारा किया गया चिंतन भाषावैज्ञानिक सिद्धांतों से संचालित है। जब एक भाषा से दूसरी भाषा में कथ्य का अंतरण होता है, तब दोनों भाषाओं में शब्द, पदबंध, वाक्य तथा पाठ के स्तर पर सामंजस्य या तालमेल बैठाया जाता है। इस प्रक्रिया में निश्चित रूप से पाठ में कुछ हद तक असहजता आ जाती है। यही असहजता अनुवादभास की स्थिति को जन्म देती है। अनुवाद की प्रक्रिया पर संकेतवैज्ञानिक दृष्टि से भी विचार किया जा सकता है, जहां इस प्रकार की संभावित असहजता निर्माण करने वाले तत्व(शब्द, पदबंध, वाक्य तथा पाठ) केंद्र में ही नहीं होते, क्योंकि संकेतविज्ञान अनुवाद को सीधे-सीधे अंतरप्रतीकात्मक अनुवाद से जोड़ता है और अंतरप्रतीकात्मक अनुवाद की संकल्पना प्रतीकों और संकेतों की बात करती है। अनुवादक यदि अनुवाद की भाषावैज्ञानिक आधारित प्रक्रिया के प्रभाव से स्वयं के मस्तिष्क को मुक्त कर के संकेतवैज्ञानिक दृष्टि से मूल और लक्ष्य पाठ को देखें तो निश्चित ही अनुवाद में आने वाली यह असहजता, अनुवादभास की संभावना को कम किया जा सकता है। और अनुवाद में संकेतवैज्ञानिक संदृष्टि 'अनुवादाभास एक वास्तविकता है' इस तथ्य को खारिज कर सकता है।

मूल शब्द : अनुवाद, अनुवादाभास, संकेतविज्ञान, भाषाविज्ञान।

प्रस्तावना

मनुष्य के ज्ञान-विज्ञान का क्षेत्र अत्यंत विस्तृत है। कभी वह काव्य का सृजन करता है तो कभी नाटक का। कभी दर्शनशास्त्र की रचना करना है तो कभी विज्ञान के विविध विषयों से संबंधित साहित्य का। इस ज्ञान के साहित्य को दूसरे भाषा-भाषी समुदायों तक संप्रेषित करने का महत्वपूर्ण कार्य अनुवाद के माध्यम से संभव हो पाया है। बहुभाषिकता के संदर्भ में अनुवाद कर्म दो भिन्न भाषाओं के बीच सेतु है। आज भूमंडलीकरण के परिणामस्वरूप जैसे-जैसे संसार सिमटता जा रहा है, वैसे-वैसे अनुवाद व्यवहार अनिवार्य होता जा रहा है।

वास्तव में बहुभाषिकता की स्थिति में ही अनुवाद की आवश्यकता और उद्भव के बीज निहित है(बेबेल के मीनार की प्रसिद्ध कथा इसी बात की पुष्टि करती है)। कहने का तात्पर्य यह कि भाषा और अनुवाद अनिवार्य रूप से एक दूसरे से जुड़े हुए हैं। अत: अनुवाद चिंतकों ने अनुवाद के सिद्धांत पक्ष पर भाषावैज्ञानिक दृष्टि विचार किया। भाषाविज्ञान के क्षेत्र में जब भाषा के प्रकृति पर चिंतन का प्रभाव अनुवाद पर भी पड़ा। सुप्रसिद्ध भाषाविज्ञानी फर्दिनांद दी सस्यूर ने भाषा की प्रकृति को समझने-समझाने के लिए 'प्रतीक' की संकल्पना प्रस्तावित की और भाषा को 'यादृच्छिक प्रतीकों की व्यवस्था' के रूप में परिभाषित किया। सस्यूर की इस स्थापना से भाषा विज्ञान के क्षेत्र में नई क्रांति आई, जिसने विभिन्न क्षेत्रों की बहुत-सी मान्यताओं को काफ़ी हद तक प्रभावित किया। आगे अर्थव्यवहार से जुड़े अन्य क्षेत्रों के साथ भाषा और अनुवाद को भी संकेतविज्ञान नामक नई शाखा के अंतर्गत देखा जाने लगा और रोमन याकोब्सन ने अनुवाद के व्यापक दृष्टिकोण पर बात करते हुए

अनुवाद के तीन प्रकार1 प्रस्तावित किए-

- अंत:भाषिक अनुवाद (Intralingual Translation)
- अंतरभाषिक अनुवाद (Interlingual Translation)
- अंतरप्रतीकात्मक अनुवाद (Intersemiotic Translation)

अनुवाद के व्यापक संदर्भ में अनुवाद के उपरोक्त तीनों प्रकार सम्मिलित हैं, जिन्हें 'प्रतीक विज्ञान' या 'संकेत विज्ञान' के परिप्रेक्ष्य में देखा जाता है। परंतु अनुवाद का यह व्यापक संदर्भ अभी भी गंभीर चिंतन से अछूता है।

अनुवादाभास की संकल्पना और अनुवाद

बीसवीं शताब्दी में भाषावैज्ञानिक दृष्टि से अनुवाद पर जो चिंतन हुआ, उसमें अनुवाद का अर्थ स्पष्ट करने और उसकी परिभाषा को सर्वांगीण बनाने का प्रयास किया गया। कैटफर्ड ने अनुवाद को भाषिक 'प्रतिस्थापन'2 माना तो नाइडा और चार्ल्स टैबर ने इसे 'पुन:सृष्टि'3, बर्खुदारोव ने 'रूपांतरण' तो फाइदोरोव ने 'अभिव्यक्ति' कहा है। परंतु अनुवाद न तो 'अर्थांतरण' है और न ही 'भाषिक प्रतिस्थापन'। वस्तुत: भाषा की प्रकृति ऐसी स्थिर या समरूपी नहीं है कि एक भाषा की इकाई को दूसरी भाषा की इकाई द्वारा प्रतिस्थापित किया जा सके। भाषा न तो ऐसी निष्क्रिय ग्रहीता है जो किसी अन्य भाषा के कथ्य को बिना किसी टकराव के अपने भीतर समेट ले।4 अत: जब एक भाषा से दूसरी भाषा में कथ्य को ले जाया जाता है, तब दोनों भाषाओं में शब्द, पदबंध, वाक्य तथा पाठ के स्तर पर सामंजस्य या तालमेल बैठाया जाता है। इस प्रक्रिया में निश्चित रूप से पाठ में कुछ हद तक असहजता आ जाती है। यही असहजता अनुवादभास की स्थिति को जन्म देती है।

अनुवादाभास या अनुवादी भाषा अंग्रेज़ी के Translationese का हिंदी पर्याय है। 'गेलरस्टन के शब्दों में अनुवादाभास 'a set of fingerprints' है, जिसे हम प्रभाव या छाप कह सकते हैं, जो एक भाषा अनुवाद के दौरान दूसरी भाषा पर छोड़ जाती है। इस दृष्टि से गेलरस्टम ने अंग्रेज़ी-स्वीडिश अनुवाद में प्रयुक्त स्वीडिश भाषा भेद दर्शाने के उद्देश्य से स्वीडिश पाठ पर अंग्रेज़ी के इन प्रभाव या छाप (Fingerprint) का अन्वेशन किया है।5 पीटर न्यूमार्क अनुवादाभास को अनुवादक के अवबोध या असावधानी के कारण होने वाले दोष के रूप में देखते है।6 उसी प्रकार अनुवादाभास को अनुवाद की असहजता या व्याकरणपरक विचलन भी कहा गया है।7

एक भाषा से दूसरी भाषा में अनुवाद करते समय मूल भाषा पाठ के व्याकरणिक-शब्दगत-प्रोक्तिगत गठन को इस सीमा तक और अनपेक्षित रूप से तथावत लक्ष्य भाषा में संक्रांत कर देना कि वह(लक्ष्य भाषा) असहज प्रतीत होने लगे, यह वास्तविक तथा संभावित रूप से 'अनुवादाभास' की स्थिति को जन्म देती है। **यह स्थिति इस सैद्धांतिक धारणा के अनुसार है कि अनुवाद में मूल भाषा पाठ प्रत्यक्ष मार्ग से यात्रा कर लक्ष्य भाषा पाठ का रूप ग्रहण करता है**, इस प्रक्रिया में अनुवादाभास की संभावना रहती है। इसके प्रमूख लक्षण हैं- अनपेक्षित असहजता, आंशिक अस्पष्टता, अनुपयुक्तता, मूल भाषा गठन का अनावश्यक संक्रमण, व्याकरणनिष्टता और रूढ़िबद्ध शब्दार्थ-संबंध-व्यवस्था से अंशत: और कभी-कभी विचलन।8 वास्तव में अनुवादाभास अनुवाद व्यवहार की प्रकृति में निहित तत्व है, जिससे अनुवाद अनुवाद सा प्रतीत होता है। साहित्य के क्षेत्र में आदर्श अनुवाद की कसौटी यह होती है कि अनुवाद पढ़ते समय मूल रचना पढ़ने जैसे अनुभव हो। परंतु वास्तविकता यह है कि अनुवाद में अनुवादाभास की संभावना बनी रहती है।

अनुवाद की प्रक्रिया : भाषावैज्ञानिक संदृष्टि बनाम संकेतवैज्ञानिक संदृष्टि

अनुवाद पर भाषावैज्ञानिक दृष्टि से चिंतन करने वाले विद्वानों ने अनुवाद की प्रक्रिया के संदर्भ में कहा है कि अनुवाद की प्रक्रिया पूर्णत: भाषिक प्रक्रिया है, जिसमें एक भाषा से दूसरी भाषा में संदेश और संरचना का अंतरण होता है। इसमें मूल भाषा पाठ के कथ्य को लक्ष्य भाषा पाठ में प्रतिस्थापित किया जाता है। अनेक विद्वानों ने अनुवाद प्रक्रिया के संबंध में गंभीर चिंतन किया है,

जिनमें युजीन ए. नाइडा, पीटर न्यूमार्क तथा बाथगेट प्रमुख हैं। नाइडा के अनुवाद प्रक्रिया के तीन सोपान निर्धारित किए हैं- विश्लेषण, अंतरण और पुनर्रचना। इनके अनुसार अनुवादक पहले स्रोत भाषा संदेश का स्पष्ट एवं सरल भाषिक रूपों में विश्लेषण कर उसका अर्थ ग्रहण करता है। **अर्थबोध हो जाने के बाद संदेश का लक्ष्यभाषा में अंतरण होता है, जिसमें दोनों भाषाओं के बीच विभिन्न स्तरों पर तालमेल स्थापित होता है।** अंत में अनुवादक मूल भाषा पाठ के संदेश की बनावट तथा बुनावट के अनुसार पुनर्रचना करता है। अनुवाद संबंधी सभी समस्याओं का समाहार अनुवाद सिद्धांत से होता है, जो भाषाविज्ञान के सिद्धांतों के भीतर व्याख्या करता है।9

भाषिक प्रक्रिया विकोडीकरण और कोडीकरण की प्रक्रिया है। एक भाषा में वक्ता या लेखक संदेश को भाषाबद्ध रूप प्रदान करता है अर्थात कोडीकरण करता है। इसका संचरण मुखोच्चार या लेखन के माध्यम से करता है और फिर इसका विकोडीकरण कर अर्थ ग्रहण करता है।10 भाषिक प्रक्रिया में कोडीकरण और विकोडीकरण की प्रक्रिया होती है और अनुवाद की प्रक्रिया भी भाषिक होने के कारण इसे अनुवाद के संदर्भ में भी लागू किया गया है। इस अनुप्रयोग के तीन स्तर हैं- **विकोडीकरण** के स्तर पर भाषा का विश्लेषण होता है। **अंतरण** के स्तर पर मूल भाषा के संदेश को लक्ष्य भाषा के संदेश में रखा जाता है। **कोडीकरण** के स्तर पर यह मुक्त नहीं है, क्योंकि इसमें कुछ प्रतिबंध आते हैं। इसमें शैलीगत बाधाएँ खड़ी होती हैं।11 इसमें पाठ की संरचना और बुनावट के अनुसार सामग्री को देखा जाता है। समतुल्यता के आधार पर अनूदित पाठ मूल पाठ के सहपाठ के रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास रहता है। इस प्रयास में अनुवादक जाने-अनजाने स्रोत भाषा का कुछ अंश लक्ष्य भाषा के अनूदित पाठ पर छोड़ता चलता है। अनूदित भाषा के लक्ष्य भाषा पर पड़ने वाले प्रभाव के संदर्भ में डॉ. सुरेश कुमार कहते हैं कि "अनुवाद प्रक्रिया से लक्ष्य भाषा की सामान्य व्यवस्था और प्रयोगगत रूढ़ियाँ प्रभावित होती हैं- तथाकथित रूप से विनयभंग होता है और नवाचार भी दिखाई देते हैं।"12

उदाहरण के लिए-

The judgment has been reserved.

निर्णय सुरक्षित रख लिया गया है।

निर्णय की घोषणा स्थगित कर दी गई है।

निर्णय बाद में सुनाया जाएगा।

अनुवादाभास की लक्षणभूत अभिव्यक्तियाँ तब प्रकट होती हैं, जब द्विभाषिक संपर्क की अनुवादपरक स्थिति में मूल भाषा की भाषिक इकाइयों को प्रत्यक्ष प्रक्रिया द्वारा लक्ष्य भाषा की ऐसी इकाइयों में परिवर्तित किया जाता है, जो सामान्य रूप से लक्ष्य भाषा व्यवस्था में स्वीकार्य नहीं होती, यद्यपि उनसे संप्रेषण में बाधा नहीं आती।13

अनुवाद एक व्यवहार विधा है। अनुवाद की प्रक्रिया पर संकेतवैज्ञानिक दृष्टि से भी विचार किया जा सकता है, जहां इस प्रकार की संभावित असहजता निर्माण करने वाले तत्व(शब्द, पदबंध, वाक्य तथा पाठ) केंद्र में न रहते हुए सीधे संकेतों और उनके संकेतित तथा संकेतार्थ की बात की जाती है। अत: सफल अनुवाद के लिए अनुवादक को संकेतधारित उपागम अपनाना चाहिए। यह प्रक्रिया निम्न चरणों में स्पष्ट है:

मूल पाठ के संकेतों और प्रतीकों का अर्थपरक, अभिव्यक्तिपरक और समाजपरक उद्देश्य को समझना।

लक्ष्य भाषा में उसी प्रकार के संकेतों और प्रतीकों का चयन करना।

मूल पाठ में निहित संकेतों और प्रतीकों को यथासंभव अर्थपरक, अभिव्यक्तिपरक और समाजपरक उद्देश्यानुसार लक्ष्यभाषा के संकेतों और प्रतीकों में अंतरित करना।

उपरोक्त वर्णित प्रक्रिया अनुवाद की प्रक्रिया के आधारभूत तीन चरणों पर आधारित अवश्य है, परंतु इस प्रक्रिया का दृष्टिकोण भाषावैज्ञानिक न होते हुए संकेतवैज्ञानिक है। संकेतविज्ञान अनुवाद को सीधे-सीधे अंतरप्रतीकात्मक अनुवाद से जोड़ता है और अंतरप्रतीकात्मक अनुवाद की संकल्पना प्रतीकों और संकेतों की बात करती है। अनुवाद के भाषाधारित दृष्टिकोण से अनुवाद में असहज तत्वों के आ जाने की संभावना रहती है, **परंतु संकेत आधारित संदृष्टि इस संभावना से रहित इस आधार पर कही जा सकती है कि इस प्रक्रिया में प्रत्यक्ष और परोक्ष मार्ग जैसी संकल्पनाएँ शामिल नहीं है।** अत: अनुवादाभास की स्थिति उत्पन्न करने वाले चरण14 की ओर जाने का मार्ग अनुवादक के लिए बंद है। अनुवादक को अनुवाद करते समय केवल और केवल पाठ में निहित प्रतीकों, शैली, आदि के लक्ष्य पाठ में समतुल्य प्रतीकों, शैली आदि को चुनना होता है। यहाँ भाषापरक और संकेतपरक संदृष्टि से अनुवाद की प्रक्रिया में निहित बहुत ही महीन अंतर को समझना आवश्यक है। इसे हम एक उदाहरण से समझ सकते हैं-

उदाहरण-

We are prepared to meet *any situation*.

हम *किसी भी स्थिति* का सामना करने के लिए तैयार हैं।

हम *हर प्रकार की स्थिति* का सामना करने के लिए तैयार हैं।

उपरोक्त उदाहरण में अंग्रेज़ी के any situation शब्द के लिए भाषावैज्ञानिक संदृष्टि से अनुवाद की प्रक्रिया अपनाने पर अनुवादक निश्चित ही 'किसी भी स्थिति' शब्द का प्रयोग करेगा। परंतु संकेतवैज्ञानिक संदृष्टि से उक्त शब्द का अनुवाद लक्ष्य भाषा के अभिव्यक्तिपरक उद्देशानुसार 'हर प्रकार की स्थिति' ऐसा करेगा।

निष्कर्ष

स्पष्ट है कि संकेतविज्ञान की परिधि भाषाविज्ञान की अपेक्षा व्यापकतर है तथा अनुवाद कार्य जैसे संप्रेषण व्यापार के अध्ययन के उपयुक्त है।15 अनुवादक यदि अनुवाद की भाषावैज्ञानिक आधारित प्रक्रिया के प्रभाव से स्वयं के मस्तिष्क को मुक्त कर के संकेतवैज्ञानिक दृष्टि से मूल और लक्ष्य पाठ को देखें, तो निश्चित ही अनुवाद में आने वाली यह असहजता, अनुवादभास की संभावना को कम किया जा सकता है। अनुवाद में संकेतवैज्ञानिक संदृष्टि 'अनुवदाभास एक वास्तविकता है' इस तथ्य को खारिज करने की क्षमता रखती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

- गोस्वामी, के.के., अनुवाद विज्ञान की भूमिका, राजकमल प्रकाशन : इलाहाबाद, 2012
- कुमार, सुरेश,अनुवाद सिद्धांत की रूपरेखा, वाणी प्रकाशन : नई दिल्ली, 2005
- On Grammatical Translationese, Diana Santos
- Translationese and Its Dialects, Moshe Koppel and Noam Ordam
- Newmark, Peter, About Translation, 2001

1. अनुवाद विज्ञान की भूमिका, के.के.गोस्वामी, पृ.सं. 24
2. The replacement of textual material in one language by equivalent textual material in another language.
3. Translating consists in reproducing in the receptor language the closest natural equivalent to the massage of the source language, first in the terms of meaning and secondly in terms of style.
4. अनुवाद विज्ञान की भूमिका, के.के.गोस्वामी, पृ.सं. 15
5. Gellerstam, 1996
6. About Translation, Peter Newmark, 2001
7. Wiktionary
8. अनुवाद सिद्धांत की रूपरेखा, सुरेश कुमार, पृ.सं.181
9. अनुवाद विज्ञान की भूमिका, के.के.गोस्वामी, पृ. सं. 31
10. 32, वहीं
11. 33, वहीं
12. अनुवाद सिद्धांत की रूपरेखा, सुरेश कुमार,पृ.सं. 185
13. अनुवाद सिद्धांत की रूपरेखा, सुरेश कुमार,पृ.सं.183
14. अनुवादाभास की स्थिति इस सैद्धांतिक धारणा के अनुसार है कि अनुवाद में मूल भाषा पाठ प्रत्यक्ष मार्ग से यात्रा कर लक्ष्य भाषा पाठ का रूप ग्रहण करता है।
15. अनुवाद सिद्धांत की रूपरेखा, सुरेश कुमार,पृ.सं. 34

जनपद भिण्ड (म0प्र0) में जनसंख्या का स्थानिक वितरण : एक भौगोलिक अध्ययन''

शोध

डॉ0 पुष्पहास पाण्डेय
पी–एच.डी.–नेट
सहायक प्राध्यापक, (भूगोल)
अनुदानित महाविद्यालय
सम्बद्ध छ0 शा0 म0 विश्वविद्यालय–कानपुर
&
शिवम् वर्मा
नेट–जे.आर.एफ.
शोध छात्र,
(भूगोल)–जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर

शोध सार

जनसंख्या के स्थानिक वितरण तथा सम्बंधित विशेषताओं के मध्य घनिष्ठ अन्तर्सम्बंध होता है। क्षेत्र विशेष में उपस्थित जनसंख्या स्वरूप न केवल विभिन्न क्षेत्रान्तर्गत उपलब्ध भौगोलिक दशाओं द्वारा प्रभावित होता है अपितु क्षेत्र में उपस्थित विभिन्न संसाधनों को उपयोग कर, उन्हें भिन्न–भिन्न प्रकार से प्रभावित भी करता है। अध्ययन क्षेत्र भी इसी विचार को आत्मसात किये हुये है। अध्ययन क्षेत्र जनपद भिण्ड (म0प्र0) के वर्तमान स्वरूप में जनसंख्या वितरण की मुख्य भूमिका है, क्योंकि जनसंख्या न केवल स्वयं में संसाधन है, अपितु विविध साधनों को संसाधनों में परिवर्तित करने हेतु सदैव प्रयत्नशील रहती है।

विशिष्ट शब्दः संसाधन, जनसंख्या घनत्व, वितरण, आत्मसात्।

प्रस्तावनाः

सम्पूर्ण विश्व में सर्वाधिक महत्वपूर्ण संसाधन के रूप में मानव की पहचान है। मानव स्वयं न केवल एक संसाधन है, अपितु समस्त संसाधनों का स्वामी एवं उपयोग हेतु निर्णायक भी है। जनसंख्या वृद्धि के परिणाम स्वरूप मानव के कालिक वितरण के साथ ही साथ उसके स्थानिक वितरण में भी परिर्वतन हुआ विभिन्न कारक मानव के स्थानिक वितरण को प्रभावित करते हैं, जैसे–मानव जन्म दर, मृत्यु दर, स्थानान्तरण, शिक्षा के अवसर, सुरक्षा, स्वास्थ्य सुविधायें आदि। साथ ही साथ जनसंख्या घनत्व भी क्षेत्रानुसार भिन्न–भिन्न होता है। अध्ययन क्षेत्र जनपद भिण्ड (म0प्र0) भी इसी तथ्य से सम्बद्ध है। अध्ययन क्षेत्र जनपद भिण्ड (म0प्र0) के विभिन्न पक्षों से जनसंख्या का स्थानिक वितरण न केवल प्रभावित होता है, अपितु उन्हें प्रभावित भी करता है।

अध्ययन क्षेत्रः

मध्यप्रदेश राज्य की उत्तरी सीमा पर अवस्थित अध्ययन क्षेत्र जनपद भिण्ड (म0प्र0) की अपनी एक विशिष्ट पहचान है। अध्ययन क्षेत्र जनपद भिण्ड (म0प्र0) का विस्तार 25^0 55′ उत्तरी अक्षांश से 26^0 48′ उत्तरी अक्षांश एवं 78^0 12′ पूर्वी देशान्तर से 79^0 05′ पूर्वी देशान्तर के मध्य है। अध्ययन क्षेत्र का भौगोलिक क्षेत्रफल 4459 वर्ग किमी0 है। प्रशासनिक दृष्टिकोण से अध्ययन क्षेत्र जनपद भिण्ड (म0प्र0) 07 तहसीलों, 06 विकासखण्डों, 447 ग्राम पंचायतों, 933 ग्रामों में विभक्त है। अध्ययन क्षेत्र में औसत वार्षिक वर्षा 759.2 मिमी0 है, जबकि औसत तापमान 30^0 सेण्टीग्रेड से 36^0 सेण्टीग्रेड के मध्य रहता है। अध्ययन क्षेत्र में प्रवाहित होने वाली नदियो में चम्बल, क्वारी, सिन्ध, पहूज, बेसली इत्यादि प्रमुख हैं।

जनपद भिण्ड (म0प्र0)

स्थिति एवं विस्तार

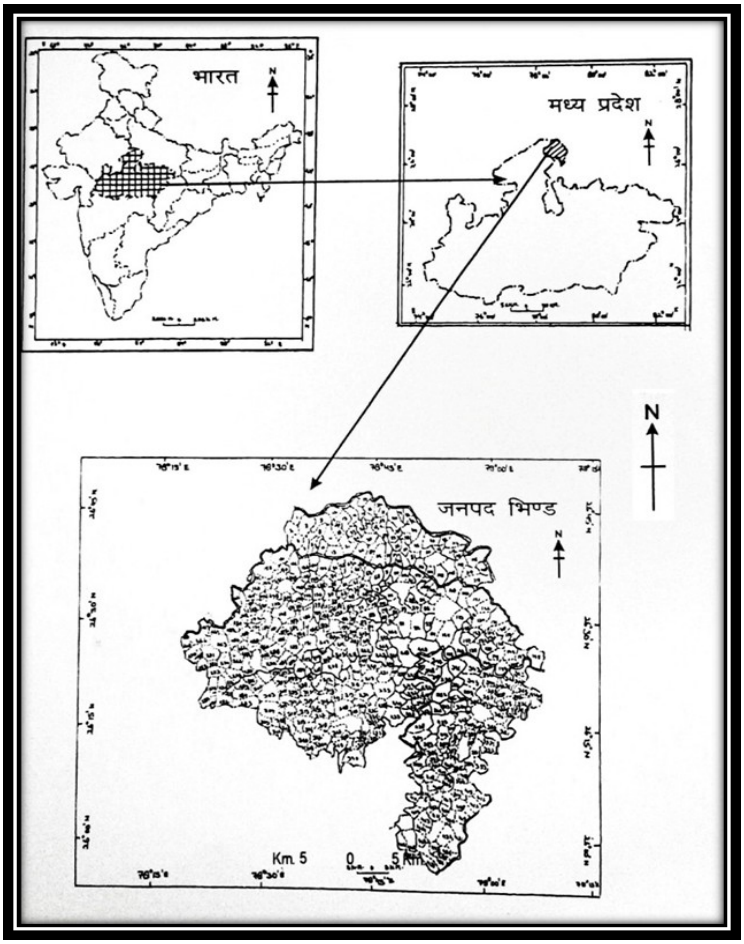

परिकल्पना निर्माणः

जनसंख्या स्वरूप क्षेत्रानुसार असमान होता है।

जनसंख्या का स्थानिक वितरण अनुकूलतम दशाओं से मुख्यतः सम्बद्ध होता है।

भिन्न–भिन्न कारक जनसंख्या वितरण एवं घनत्व को प्रभावित करते हैं।

जनसंख्या एक गतिमान पक्ष है।

उद्देश्यः

जनसंख्या के स्थानिक वितरण एवं घनत्व की व्याख्या करना।

जनसंख्या के स्थानिक वितरण में असमानता हेतु उत्तरदायी कारकों की व्याख्या करना।

जनसंख्या के स्थानिक वितरण से सम्बंधी समस्याओं को जानना।

समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करना।

विधितन्त्रः

प्रस्तुत शोध पत्र में वर्णित तथ्यों से सम्बंधित सूचनाओं एवं आंकड़ों का संकलन, विश्लेषण एवं प्रस्तुतीकरण भूगोलवेत्ताओं एवं अन्य विद्वानों द्वारा प्रदर्शित मार्ग का अनुसरण करते हुये किया जायेगा।

विश्लेषण एवं व्याख्या

यह सर्वमान्य तथ्य है, कि किसी प्रदेश की जनसंख्या का स्थानिक वितरण उस प्रदेश एवं जनसंख्या संकेन्द्रण की मात्रा उस प्रदेश के प्राकृतिक एवं मानवीय दोनों कारकों की प्रादेशिक विभिन्नता के समुच्चिक प्रभाव का प्रतिफल होती है। जनसंख्या का स्थानिक वितरण एवं प्रबन्धन भौतिक, आर्थिक व सामाजिक आपदाओं, राजनैतिक निर्णयों तथा संस्कृति आदि कारकों द्वारा न केवल निर्धारित होता है, अपितु ये समस्त कारक मानव का प्राकृतिक संसाधनों से समायोजन स्थापना हेतु अभिप्रेरित भी करते हैं। ट्रिवार्था (1953), क्लार्क (1972), जेलेन्सकी (1966), गार्नियर (1966) आदि ने जनसंख्या के परिर्वतनशील स्वरूप की व्याख्या कर अध्ययन प्रस्तुत किया।

अध्ययन क्षेत्र जनपद भिण्ड (म0प्र0) की जनसंख्या के स्थानिक वितरण को प्रदर्शित किया गया है। अध्ययन क्षेत्र के जनसंख्या के स्थानिक वितरण मानचित्र के देखने से स्पष्ट होता है, कि जनपद में जनसंख्या का अधिक जमाव उन क्षेत्रों में अधिक देखने को मिलता है, जो सामाजिक–आर्थिक सेवाओं एवं सुविधाओं की दृष्टि से न केवल महत्वपूर्ण है, अपितु कृषि की भी दृष्टि से महत्वपूर्ण है। ऐसे क्षत्रों में जनसंख्या का स्थानिक वितरण जनपद के अन्य क्षेत्रों की तुलना में अधिक है। इसके विपरीत जो क्षेत्र नगरीय क्षेत्रों से दूर हैं, वहाँ भी जनसंख्या का विरल स्थानिक वितरण प्रतिरूप देखने को मिलता है।

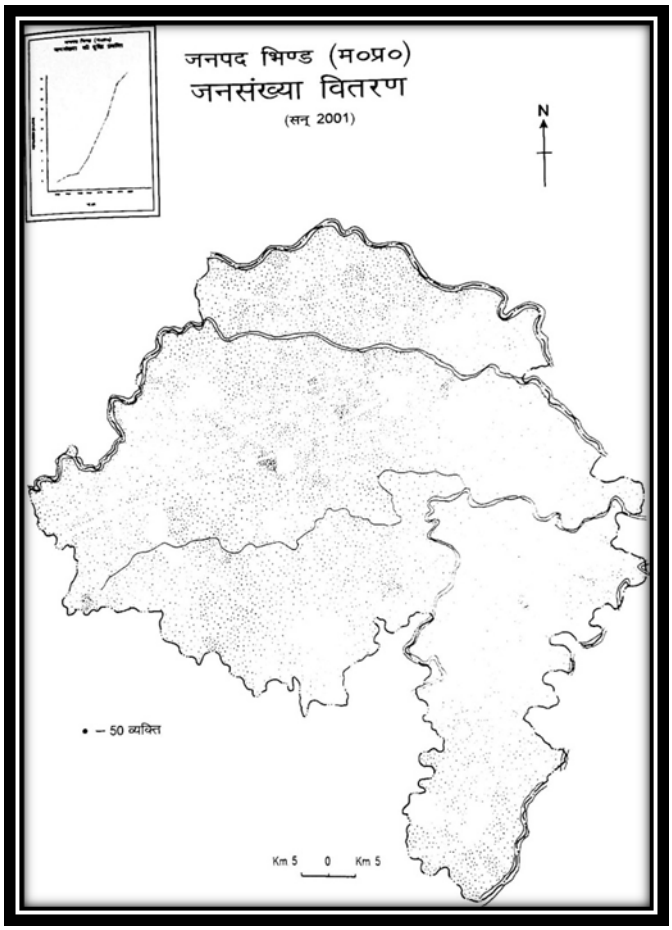

जनसंख्या का अधिक घनत्व नगरीय क्षेत्रों के समीपस्थ के अधिवासों में अधिक देखने को मिलता है। इसके विपरीत नगरीय क्षेत्रों से दूर स्थित अधिवासों में जनसंख्या का घनत्व कम देखने को मिलता है। इसके साथ ही साथ जनपद में जनसंख्या का स्थानिक वितरण परिवहन मार्गों के सहारे सहारे अधिक तथा सड़क मार्गों से दूरस्थ क्षेत्रों में जनसंख्या विरल देखने को मिलती है। सामान्य रूप से अध्ययन क्षेत्र में जनसंख्या का स्थानिक वितरण सामान्य दे

खने को मिलता है। अध्ययन क्षेत्र जनसंख्या के सामान्य वितरण का प्रमुख कारण जनपद की भौगोलिक अवस्थिति है। जनपद की उत्तरी सीमा का निर्धारण करने वाली चम्बल नदी तथा इसकी सहायक क्वारी नदी ने अध्ययन क्षेत्र में मृदा कटाव से जनित बीहड़ क्षेत्र में जनपद के अन्य भागों की अपेक्षा जनसंख्या विरल है।

अध्ययन क्षेत्र जनपद भिण्ड (म0प्र0) में बीहड़ क्षेत्र में जनसंख्या के विरल होने का प्रमुख कारण कृषि योग्य भूमि की अनुपलब्धता, भूमि कटाव, मृदा में आद्रता की कमी तथा इन बीहड़ी क्षेत्रों में दस्यु प्रभाव आदि कारक उत्तरदायी हैं। इसके विपरीत, जिन क्षेत्रों में जनसंख्या घनत्व अधिक है, वहाँ न केवल उपजाऊ भूमि की उपलब्ध ाता है, अपितु अन्य सामाजिक–आर्थिक सुविधाओं की भी उपलब्धता देखने को मिलती है।

जनसंख्या का घनत्व :

जनसंख्या घनत्व से तात्पर्य, किसी प्रदेश के क्षेत्रफल तथा उस प्रदेश की जनसंख्या के पारस्परिरक अनुपात से होता है। इस प्रकार जनसंख्या घनत्व प्रतिवर्ग इकाई भू भाग पर निवास करने वाली जनसंख्या से है। किसी भी क्षेत्र में जनसंख्या घनत्व का सम्बंध भूमि की उत्पादकता से होता है। जनसंख्या वृद्धि के साथ–साथ उस क्षेत्र के कृषि विकास में भी गतिशीलता परिलक्षित होती है। अध्ययन क्षेत्र जनपद भिण्ड (म0प्र0) में जनसंख्या का घनत्व उत्तर में नदी घाटियों के समतल भू–भागों, छोटे समतल पठारी क्षेत्रों एवं भिण्ड के मैदान में अधिक देखने को मिलता है। इसके साथ ही साथ जनसंख्या का घनत्व वहाँ भी अधिक देखने को मिलता है, जहाँ उपजाऊ कृषि भूमि, यातायात के साधनों का विकास एवं सड़क मार्गों के संगम केन्द्र हैं। अटेर के पश्चिम में भिण्ड–अटेर मार्ग पर स्थित ग्राम छौदों, प्रतापपुरा, परा में जनसंख्या घनत्व अधिक देखने को मिलता है।

अध्ययन क्षेत्र जनपद भिण्ड (म0प्र0) में जनसंख्या के साधन घनत्व प्रतिरूप में वृहद स्तर पर प्रादेशिक असमानता परिलक्षित नहीं होती है। केवल जनसंख्या का सघन प्रतिरूप नगरीय क्षेत्रों के आस–पास ही देखने को मिलता है। जनपद में जनसंख्या के घनत्व की सामान्य विशेषताओं के अभिज्ञान हेतु जनसंख्या के गणितीय घनत्व का विश्लेषण किया गया है।

गणितीय घनत्व :

किसी क्षेत्र विशेष के गणितीय घनत्व को जनसंख्या/क्षेत्रफल के अनुपात में प्रकट किया जाता है। अध्ययन क्षेत्र जनपद भिण्ड (म0प्र0) के जनसंख्या के घनत्व को प्रदर्शित किया गया है। अध्ययन क्षेत्र के जनसंख्या घ ानत्व के मानचित्र के अवलोकन से स्पष्ट होता है, कि जनपद में अधिक जनसंख्या घनत्व उपजाऊ मृदा के क्षेत्रों में, सड़क मार्गों के मिलान बिन्दु पर अवस्थित अधिवासों के पास अधिक देखने को मिलता हे।

सन् 1951 में अध्ययन क्षेत्र जनपद भिण्ड (म0प्र0) का जनसंख्या घनत्व 118 व्यक्ति/वर्ग किमी0 था, जो बढ़कर सन् 1961 में 143 व्यक्ति/वर्ग किमी0 हो गया। सन् 1951 से सन् 1961 के दशक में अध्ययन क्षेत्र जनपद भिण्ड (म0प्र0) के जनसंख्या घनत्व में (21.44 प्रतिशत) की अभिवृद्धि हुई और यह अभिवृद्धि सन् 1971 व में सन् 1981 में भी सतत रही। सन् 1971 में अध्ययन क्षेत्र जनपद भिण्ड (म0प्र0) का जनसंख्या घनत्व 178 व्यक्ति/वर्ग किमी0 था, जो बढ़कर सन् 1981 में 218 व्यक्ति/वर्ग किमी0 हो गया और सन् 1991 में यह घनत्व 272 व्यक्ति/वर्ग किमी0 हो गया। सन् 2001 की जनगणनानुसार जनपद की जनसंख्या घनत्व 320 व्यक्ति/वर्ग किमी0 है।

जनपद भिण्ड (म0प्र0) में विकासखण्डवार जनसंख्या का गणितीय घनत्व

क्र0	विकासखण्ड का नाम	विकासखण्ड की जनसंख्या	विकाखण्ड का क्षेत्रफल (किमी0 में)	गणितीय घनत्व
1	अटेर	119363	727.47	164
2	भिण्ड	262461	611.13	492
3	मेहगाँव	244658	958.18	255
4	गेहद	201412	986.23	204
5	रौज	130075	397.94	327
6	ल्हार	131657	597.57	220
योग जनपद भिण्ड		**1089636**	**4278.56**	**1662**

स्त्रोत : प्राथमिक जनगणनानुसार।

सन् 2001 के जनसंख्या घनत्व के मानचित्र के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि जनपद भिण्ड में जनसंख्या घनत्व में समानता परिलक्षित नहीं होती है। मानचित्र के अवलोकन से यह भी स्पष्ट होता है, कि अध्ययन क्षेत्र के सर्वाधिक 161 अधिवास (36.01 प्रतिशत) 175 से 250 व्यक्ति प्रति किमी0 के अन्तर्गत सम्मिलित हैं तथा सबसे कम अधिवास 43 (9.61 प्रतिशत) जनसंख्या घनत्व वर्ग 325 से 400 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी0 वर्ग के अन्तर्गत देखने को मिलते हैं।

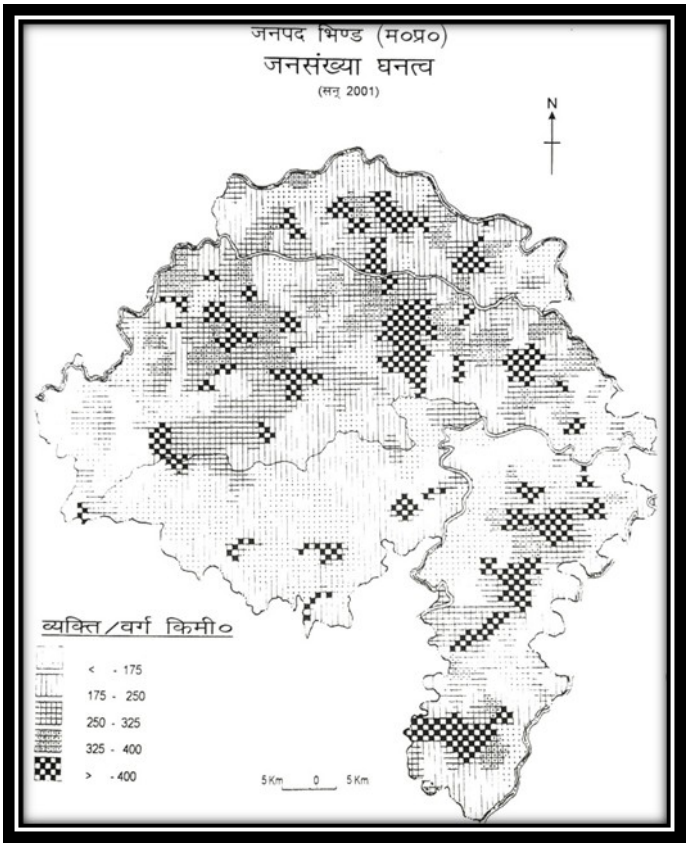

अध्ययन क्षेत्र के जनसंख्या घनत्व में क्षेत्रीय विषमता के आधार पर अध्ययन क्षेत्र जनपद भिण्ड (म0प्र0) को पाँच जनसंख्या घनत्व वर्गों में विभक्त कर अध्ययन किया गया है।

निम्न जनसंख्या घनत्व :

अध्ययन क्षेत्र जनपद भिण्ड (म0प्र0) में 175 व्यक्ति/वर्ग किमी0 से कम जनसंख्या घनत्व, अध्ययन क्षेत्र

की 68 ग्रामपंचायतों (15.21 प्रतिशत) में देखने को मिलता है। ये ग्राम पंचायतें जनपद के सभी भागों में बिखरी हुई हैं। इस वर्ग के अन्तर्गत सबसे कम घनत्व विकासखण्ड गोहद की ग्रामपंचायत आलौरी में 67 व्यक्ति/वर्ग किमी0 तथा सबसे अधिक जनसंख्या घनत्व अध्ययन क्षेत्र के विकासखण्ड गोहद की ग्रामपंचायत तुकेंडा में 175 व्यक्ति/वर्ग किमी0 हैं। इन ग्राम पंचायतों में कम जनसंख्या घनत्व के कारणों में भी विविधता देखने को मिलती है। अध्ययन क्षेत्र के उत्तर में अवस्थित ग्रामपंचायतों में कम जनसंख्या घनत्व का कारण बीहड़ भूमि तथा दस्यु प्रभावित क्षेत्र का होना है। इसके विपरीत पश्चिम व दक्षिण की ग्रामपंचायतों में यातायात के साधनों का अल्प विकास, कृषि योग्य भूमि की सीमित उपलब्धता, कृषि विकास हेतु अवसंरचनात्मक कारकों की अनुपलब्धता एवं विकसित कृषि आधारित तथा उद्योग–धन्धों के विकास की क्षीण सम्भावना आदि कारक उत्तरदायी है।

मध्यम जनसंख्या घनत्व :

अध्ययन क्षेत्र जनपद भिण्ड (म0प्र0) की 161(36.01 प्रतिशत) ग्रामपंचायतें मध्यम जनसंख्या घनत्व के क्षेत्र (175 से 250 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी0) के अन्तर्गत आती हैं। इस वर्ग के अन्तर्गत सर्वाधिक जनसंख्या घनत्व विकासखण्ड गोहद की ग्रामपंचायत सिंगवारी में 249 व्यक्ति/वर्ग किमी0 तथा सबसे कम जनसंख्या घनत्व विकास खण्ड मेंहगाँव की ग्रामपंचायत कुठौन्दा में 176 व्यक्ति/ वर्ग किमी0 मिलता है। अध्ययन क्षेत्र के उत्तर एवं मध्य भाग से अवस्थित ग्रामपंचायतों में, मध्यम जनसंख्या घनत्व देखने को मिलता है। इन ग्रामपंचायतों में कृषि का आधार कमजोर होने के कारण इस क्षेत्र में कृषि का विकास कम हुआ है। जनसंख्या प्रमुख रूप से ग्रामीण तथा सामाजिक–आर्थिक दृष्टि से भी अविकसित है। सिंचाई के साधनों का अल्प विकास तथा प्रति हेक्टेअर कम शस्योत्पादकता भी, इस क्षेत्र में निम्न जनसंख्या घनत्व हेतु प्रमुख उत्तरदायी कारक है।

मध्यम उच्च जनसंख्या घनत्व :

अध्ययन क्षेत्र जनपद भिण्ड (म0प्र0) में मध्यम उच्च जनसंख्या घनत्व 250 से 325 व्यक्ति/वर्ग किमी0 अध्ययन क्षेत्र के मध्य भाग में अवस्थित ग्रामपचायतों में तथा लहार के पठार की ग्रामपंचायतों में देखने को मिलता है। इस वर्ग के अन्तर्गत सर्वाधिक जनसंख्या घनत्व अध्ययन क्षेत्र के विकासखण्ड रौन की ग्रामपंचायत पचोखरा में 325 व्यक्ति/वर्ग किमी0 देखने को मिलता है। इसके विपरीत सबसे कम जनसंख्या घनत्व अध्ययन क्षेत्र के विकासखण्ड गोहद की ग्रामपंचायत गढहौली में 251 व्यक्ति/वर्ग किमी0 है। अध्ययन क्षेत्र के मैदानी भू–भागों की इन ग्रामपंचायतों में यद्यपि सिंचाई के साधनों का अत्याधिक विकास नहीं हुआ है, किन्तु फिर भी इस भू–भाग मं कृषकों द्वारा जलकूपों के द्वारा सिंचाई को विकसित करके उन्नत कृषि की जाती है। कृषि प्रधान इन ग्रामपंचायतों में ग्रामीण अधिवासों का सघन प्रतिरूप भी देखने को मिलता है, साथ ही साथ सामाजिक–आर्थिक कारकों जैसेः यातायात एवं अन्य कृषि अवसंरचनात्मक सुविधाओं की उपलब्धता के कारण जनसंख्या घनत्व मध्यम देखने को मिलता है। इस घनत्व वर्ग के अन्तर्गत अध्ययन क्षेत्र की 109 (24.38 प्रतिशत) ग्रामपंचायतें सम्मिलित हैं।

उच्च जनसंख्या घनत्व :

अध्ययन क्षेत्र की 43(9.61 प्रतिशत) ग्रामपंचायतों में उच्च जनसंख्या घनत्व (325 से 400 व्यक्ति/वर्ग किमी0) देखने को मिलता है। अध्ययन क्षेत्र के मेहगाँव, भिण्ड व लहार विकासखण्डों में उच्च जनसंख्या घनत्व देखने को मिलता है। इस क्षेत्र में जनसंख्या घनत्व अधिक होने का कारण भूमि का उपजाऊ होना, सिंचाई के साधनों का

विकास, नगरीय क्षेत्रों की समीपता तथा ग्रामीण बस्तियों का सघन प्रतिरूप प्रमुख कारण है। इस वर्ग के अन्तर्गत सर्वाधिक जनसंख्या घनत्व विकासखण्ड अटेर की ग्रामपंचायत खड़ेरी में 399 व्यक्ति/वर्ग किमी0 तथा सबसे कम जनसंख्या घनत्व विकासखण्ड लहार की ग्रामपंचायत मुरावली में 326 व्यक्ति/वर्ग किमी0 देखने को मिलता है।

अतिउच्च जनसंख्या घनत्व :

अध्ययन क्षेत्र जनपद भिण्ड (म0प्र0) में अतिउच्च जनसंख्या घनत्व क्षेत्रों का विस्तार अध्ययन क्षेत्र के उत्तर में दक्षिण पश्चिम में तथा दक्षिण पूर्व में लहार के पठार में देखने को मिलता है। इन क्षेत्रों में अतिउच्च जनसं ख्या घनत्व होने के कारण बड़े नगरों की समीपता, सामाजिक आर्थिक दृष्टि से समुन्नत, कृषि प्रधान क्षेत्र होने के कारण यहाँ बहु शस्यीय कृषि हेतु सामाजिक–आर्थिक सुविधाओं की उपलब्धता के कारण जनसंख्या का घनत्व अतिउच्च है। इस वर्ग के अन्तर्गत अध्ययन क्षेत्र की 66 ग्रामपंचायतें (14.4 प्रतिशत) सम्मिलित हैं। इस वर्ग के अन्तर्गत सर्वाधिक जनसंख्या घनत्व 5296 व्यक्ति/वर्ग किमी0 विकासखण्ड गोहद की ग्रामपंचायत मालनपुर में तथा सबसे कम जनसंख्या घनत्व विकासखण्ड मेंहगाँव की ग्रामपंचायत लेहरा में 406 व्यक्ति/वर्ग किमी0 देखने को मिलता है।

इस प्रकार अध्ययन क्षेत्र जनपद भिण्ड (म0प्र0) का जनसंख्या घनत्व मध्य प्रदेश राज्य के जनसंख्या घ ानत्व (196 व्यक्ति/वर्ग किमी0) से पर्याप्त अधिक (320 व्यक्ति/वर्ग किमी0) तथा भारत के जनसंख्या घनत्व (324 व्यक्ति/वर्ग किमी0) के लगभग समान हैं। सर्वेक्षण से यह भी स्पष्ट है, कि अध्ययन क्षेत्र जनपद भिण्ड (म0प्र0) में एक ओर बीहड़ भूमि में जनसंख्या घनत्व 175 से 250 व्यक्ति/ वर्ग किमी0 के मध्य हैं। वहीं मैदानी क्षेत्रों में जनसंख्या घ ानत्व 325 से 400 व्यक्ति/वर्ग किमी0 तथा 400 व्यक्ति/वर्ग किमी0 से अधिक देखने को मिलता है। अध्ययन क्षेत्र जनपद भिण्ड (म0प्र0) में जनसंख्या घनत्व में क्षेत्रीय असमानता का प्रमुख कारण जनपद के उच्चावच्चीय स्वरूप में विषमता, कृषिगत अवसंरचनात्मक कारकों की अनुपलब्धता एवं अन्य कारक जैसे बेरोजगारी एवं कृषि श्रमिकों की कमी प्रमुख रूप से उत्तरदायी हैं।

निष्कर्ष एवं सुझाव :

अध्ययन क्षेत्र जनपद भिण्ड (म0प्र0) में जनसंख्या का स्थानिक वितरण असमान है, जिस हेतु अनेक कारण उत्तरदायी हैं जैसे–परिवहन, स्वास्थ्य, शिक्षा, सुरक्षा, बाजार, वित्त आदि। जनसंख्या के स्थानिक वितरण को नियोजित कर अध्ययन क्षेत्र में विकास सम्बंधी समानता स्थापित करने की आवश्यकता है, जिस हेतु शिक्षा, स्वास्थ्य, सिंचाई, वित्त, बाजार, सुरक्षा आदि सेवाओं व सुविधाओं के समान विकास को अंगीकृत करना होगा। इस हेतु सरकारी, सामुदायिक, व्यक्तिगत आदि स्तरों पर प्रयास करने होंगे।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- District Hand Book of Bhind (M.P.)
- सिंह, के0 एन0 एवं सिंह जे0 – आर्थिक भूगोल के मूल तत्व।
- मामोरिया, सी0बी0, (1989) : संसाधन भूगोल।
- Chandna, R.C. (1979) : “India Population Policy”
- Chandna, R.C. – Population Geography.

Socio Economic Status Related To Academic Achievement of B.Ed. Students

RESEARCH

शोध

Abstract

The present study was conducted to find out the relation of socio-economic status and academic achievement of B.Ed. students. The study comprised of 100 students of different B.Ed. colleges situated in Sri Muktsar sahib district. In the sample Male, Female category and science, Arts streams were selected for data collection and data analysis. The major findings of the study were that there was significantcorrelation between socio-economic status and academic achievement of B.Ed. students and significant difference was found between academic achievement of arts and science students, male and female students.

Introduction

Education is a primary need in this era of globalization. Education not only gives insight, it also grooms the personality, inculcates moral values, add knowledge and gives skill. Education is necessary owing to the atmosphere of competition. It is through education that he promotes his intelligence and adds his knowledge with which he can move the world for good and for evil according to his wishes. Education in fact, is one of the major "life processes" of the human beings "just as there are certain indispensable vital processes of life in a biological sense. So education may be considered a vital process in a social science. Education is indispensable to normal living, without education the individual would be unqualified for group life (Safaya, 1963). Academic Achievement assumes primary importance in the context of an education system aimed at progressive scholastic development of the child and human resources development at the macro level. The scientific rearing and education of a child is monitored on the basis of his academic achievement. Academic achievement is the core of the wider term i.e. educational growth. The importance of academic achievement in one's life cannot be over emphasized. It acts as an emotional tonic. Sound academic records are the pillars on which the entire future personality stands.

Dr. Sunita Arya

Kalgidhar institute of higher Education

Kingra, Malout (Punjab)

Academic achievement have always been the Centre of educational research and despite varied definitions about the aims of education, the academic development of the child continue to be the primary and most important goal of education . Life in general and for a student in particular has become highly competitive. Today there is no place for a mediocre student. There is limited room at the top that too only for the best. The importance of scholastic and academic achievement has raised important questions for educational researchers. What factors promote achievement in students? How far do the different factors contribute towards academic achievement? (Ramaswamy,1990). In this context, the role of socioeconomic status cannot be denied as it has a great effect on personality, learning and development of the individual and his academic achievement It is generally believed that children from high and middle socio-economic status parents are better exposed to a learning environment at home because of provision and availability of extra learning facilities. This idea is supported by Becker & Tomes (1979) when they assert that it has become well recognized that wealthyand well-educated parents ensure their children's future earning by providing them a favorable learning environment, better education, and good jobs. In contrast to this belief, children from low socio -economic status parents do not have access to extra learning facilities; hence, the opportunity to get to the top of their educational ladder may not be very easy. Drummond &Stipek (2004) while discussing their "Low-income Parents' beliefs about their role in children's academic learning" mentioned that a few of these parents indicated that their responsibilities were limited to meeting children's basic and social emotional needs, such as providing clothing, emotional support, and socializing manners.So these parents' shortsightedness toward their responsibilities in the educational processes of their children. Teachers are also a member of this large society. There are many factors and conditions which effect the academic achievement of the teachers. The light of these conditions it is very important to study socio-economic status in relation to academic achievement of B.Ed. students who are future teachers.

Objective of the Study

1. To Study the relationship between socio economic status and academic achievement of B.Ed. students.
2. To study socio economics status of arts and science students of B.Ed. Class.
3. To study socio economics status of male and female students of B.Ed. Class. .
4. To study Academic achievement of arts and science students of B.Ed. Class.
5. To study Academic achievement of male and female students of B.Ed. Class. .

Hypothesis

1. There is no significant relationship between socio economic status and academic achievement of B.Ed. students.

2. There is no significantdifference between socio economics status of arts and science students of B.Ed. Class.

3. There is no significantdifference between socio economics status of male and female students of B.Ed. Class. .

4. There is no significantdifference between Academic achievement of arts and science students of B.Ed. Class.

5.There is no significantdifference between Academic achievement of male and female students of B.Ed. Class.

Sample

100 B.Ed. students were selected randomly for the study.

Tool Used

Socio economic status scale by R.L. Bhardwaj and self-Prepare tool for academic achievement was used.

Statistical Technique Used

Mean, S.D., Karl Pearson's Product Moment Correlation and t-ratio was calculated.

Delimitation of The study

The study was delimited with respect to area and number, 100 B.Ed. students of Sri Mukatsar Sahib District was taken randomly for the study.

Analysis of data and Discussion

Table 1.1

Correlation between socio-economic status and academic achievement

Sr. No.	Variables	N	R	Level of
1.	SES	100	.2545	**
2.	Academic	100		

*Significant at 0.05 level

**Significant at 0.01level

From table 1.1 it is clear that r is significant at0.1 level as it is greater than .194 and equal to .254 (table

value at .05 and .01 level respectively) so our hypotheses that there is on significant relationship between socio-economic status and academic achievement of B.Ed. students is rejected.

Table 1.2

Mean and t-ratio between socio-economics status of Arts and Science students.

Sr. No.	Variables	N	Mean	SED	t-ratio	Level of
1	SES of Arts	46	49.63	.7139	.4622	Not
2	SES of Science	54	49.96			

*Significant at 0.05 level

**Significant at 0.01 level

From table 1.2 it is shown that t-ratio between mean score of socio-economics status of arts and science students is 0.4622. Obtained t-value is less than tabulated value at .05 levels. Soour hypotheses that there isno significant difference between socio-economic status of arts and science students of B.Ed. is accepted. It can be concluded that SES does not affect while opting science or arts group.

Table 1.3

Mean and t-ratio betweensocio-economics status of Male and Female students.

Sr. No.	Variables	N	Mean	SED	t-ratio	Level of
1	SES of	33	48.78	.8098	1.9387	Not
2	SES of	67	50.35			

*Significant at 0.05 level

**Significant at 0.01 level

From table 1.3 it is shown that t-ratio between mean score of socio-economics status of male and female students is 1.9387. Obtained t-value is less than tabulated value at .05 levels. So our hypotheses that there is no significant difference between socio-economic status of male and female students of B.Ed. is accepted. It can be concluded that SES does not affect while male or female.

Table 1.4

Mean and t-ratio between Academic Achievement of Arts and Science stu

Sr. No.	Variables	N	Mean	SED	t-ratio	Level of Significan
1	Academic	46	51.91	1.819	2.24	*
2	Academic	54	56			

*Significant at 0.05 level

**Significant at 0.01 level

From table 1.4 it is shown that t-ratio between mean score of academic achievement of arts and science students is 2.248. Obtained t-value is higher than tabulated value at .05 levels. So our hypotheses that there is no significant difference between academic achievement of arts and science students of B.Ed. are rejected. It can be concluded that science students is better than the academic achievement of arts students.

Table 1.5

Mean and t-ratio between Academic Achievement of Male and Female students.

Sr. No.	Variables	N	Mean	SED	t-ratio	Level of Significance
1	Academic Achievement of Males	33	46.61	1.579	7.099	**
2	Academic Achievement of Females	67	57.82			

*Significant at 0.05 level

**Significant at 0.01 level

From table 1.5 it is shown that t-ratio between mean score of academic achievement of male and female students is 7.099. Obtained t-value is higher than tabulated value at 0.01 levels. So our hypotheses that there is no significant difference between academic achievement of male and female students of B.Ed. is rejected. It can be concluded that female students is higher than academic achievement of male students.

Education Implications

A number of factors affect academic achievement of the students. A study of these factors can help the teachers, education planners and administers,social workers and other persons to take step to end the effect of these factors so that their success and better academic records can be assured.

Suggestion for the study

1. The study may be replicated on large sample.
2. The study was limited to a particular area i.e. Sri Mukatsar Sahib district–It is suggested that other area can be taken for study.

References

- Becker and Tomes (1979), an Equilibrium Theory of the Distribution of Income and Intergenerational Mobility." Journal of political economy, 87, 1153-1189.
- Chopra (1964), "A study of Relationship of Socio-economic factors with environments of the students in the secondary schools". Doctoral dissertation, Lucknow University.
- Drummond &Stipek (2004), "Low Income Parent's Beliefs about Their Role in Children's Academic Learning." The Elementary School Journal Vol. 104, No-3, 197-213.
- Frempong G, Willms D.(2000), "Can school quality compensate for socioeconomic disadvantage"? In: Willms D, editor. VulnerableChildren. Edmonton: University of Alberta Press; 2002. pp. 277–304.
- Goswami. R. (1982). "An Enquiry into Reading Interests of the Pupils of Standard VII to X in Relation to Intelligence", SES and Academic Achievement. Doctoral Dissertation, M. S. University, Baroda.
- Khan and Jemberu (2002), "Influence of family Socio Economic Status on educational and occupational Aspirations of high and low achieving adolescents". J. Com. Guid. Res., 19(1): 113-1
- Ramaswamy, R.(1990), "Study habits and Academic Achievement." Expt. Education., 18(10): 255- 260.
- Robert J. Havighurst (1964)"The Chicago School Survey" The Phi Delta Kappan international, Vol. 46, No. 4, pp. 162-166.
- Safaya (1963) Principles and Techniques of Education." Dhanpat Raj and Sons Com, New Delhi
- Sirin (2005) , Socio-economic status and Academic achievement, " A meta analytical Review of educational Research, 75(3), 417

Choosing The Best Digital Camera

अभ्यास

This time practice column is about choosing a good digital camera for mid level to professional photography. Hope it'll be helpful ...

TRANSFRAME TEAM

There is so much to consider when looking for the best digital camera to suit your needs. It is important to decide what features matter the most to you. The main factors, apart from cost, in assessing which is the best digital camera for you are as follows:

Size and weight
Resolution
Level of Control
Options and features

Size and weight

The size and weight of the best digital camera for one person varies greatly to that of another. If you want a camera that is lightweight and will slip into a pocket or purse then a ultra-lightweight cameras will probably be the best digital camera for your needs. These are often the least complex of the digital cameras as they offer point and shoot simplicity and are the best digital camera for beginners. At the other end of the size and weight scale comes a bulky SLR camera for the serious photographer who wants the best digital camera with all of the accessories to take the perfect shot.

Resolution

The resolution you need can narrow down which is the best digital camera for your requirements. The resolution affects the detail of an image for printing quality and the higher the resolution the greater the detail. The best digital camera for printing standard size pictures has a lower resolution than if you want to create oversize prints.

The best digital camera for being able to edit and manipulate your images is one with a resolution of 5 or 6 mega pixels so that you can crop the images with photo editing software and still print them out full size.

Level of Control

The amount of control that you have available will also be an issue in finding the best digital camera. Some people think that the best digital camera is one they can use in an automatic mode and let the camera do the work. Others choose the best digital camera that allows them more input in the creative process by manually adjusting the focus, speed, aperture and other settings. A simple point and shoot camera is the best digital camera for people not wanting to make any setting changes but the range of manual controls available on other cameras varies with make and model. The latter will require more research to find the best digital camera to meet your requirements.

Options and features

The next part in deciding which is the best digital camera to buy is to assess what, if any, additional features you would like. Here are some suggestions:

- Burst shooting which allows you to take multiple pictures in rapid succession for fast moving action shots.
- Macro photo capability that focuses on extreme close-up detail for images of flowers, insects, etc.
- Movie mode with audio to take short videos.
- Panoramic stitching function, often included in a camera's software package, which joins individual images into a multi-photo panoramic picture.
- Weatherproof casing

The most important aspect in choosing the best digital camera for you is ensuring that you are comfortable using it and have some fun taking pictures.

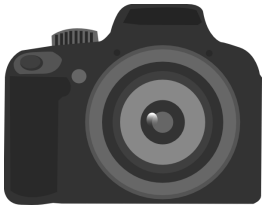

www.transframe.in

ISSN 2455-0310